IJMRSETM

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

प्रेमचंद की कालजयी रचना 'गोदान' उपन्यास के केंद्रीय पुरुष पात्र होरी के चारित्रिक वैशिष्ट्य का यथार्थ अंकन

Gurmit Singh

Associate Professor in Dept. of Hindi, Govt. College, Bundi, Rajasthan, India

सार

गोदान, प्रेमचन्द का अंतिम और सबसे महत्वपूर्ण उपन्यास माना जाता है। कुछ लोग इसे उनकी सर्वोत्तम कृति भी मानते हैं। इसका प्रकाशन १९३६ ई० में हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई द्वारा किया गया था। इसमें भारतीय ग्राम समाज एवं परिवेश का सजीव चित्रण है। गोदान ग्राम्य जीवन और कृषि संस्कृति का महाकाव्य माना जाता है। इसमें प्रगतिवाद, गांधीवाद और मार्क्सवाद (साम्यवाद) का पूर्ण परिप्रेक्ष्य में चित्रण हुआ है।[1]गोदान हिंदी उपन्यास के विकास का उज्वलतम प्रकाशस्तंभ है। गोदान के नायक और नायिका होरी और धनिया के परिवार के रूप में हम भारत की एक विशेष संस्कृति को सजीव और साकार पाते हैं, ऐसी संस्कृति जो अब समाप्त हो रही है या हो जाने को है, फिर भी जिसमें भारत की मिट्टी की सोंधी सुबास भरी है। प्रेमचंद ने इसे अमर बना दिया है।[2] गोदान प्रेमचंद का हिंदी उपन्यास है जिसमें उनकी कला अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँची है। गोदान में भारतीय किसान का संपूर्ण जीवन - उसकी आकांक्षा और निराशा, उसकी धर्मभीरुता और भारतपरायणता के साथ स्वार्थपरता ओर बैठकबाजी, उसकी बेबसी और निरीहता- का जीता जागता चित्र उपस्थित किया गया है। उसकी गर्दन जिस पैर के नीचे दबी है उसे सहलाता, क्लेश और वेदना को झुठलाता, 'मरजाद' की झूठी भावना पर गर्व करता, ऋणग्रस्तता के अभिशाप में पिसता, तिल तिल शूलों भरे पथ पर आगे बढ़ता, भारतीय समाज का मेरुदंड यह किसान कितना शिथिल और जर्जर हो चुका है, यह गोदान में प्रत्यक्ष देखने को मिलता है। नगरों के कोलाहलमय चकाचौंध ने गाँवों की विभूति को कैसे ढँक लिया है, जमींदार, मिल मालिक, पत्रसंपादक, अध्यापक, पेशेवर वकील और डाक्टर, राजनीतिक नेता और राजकर्मचारी जोंक बने कैसे गाँव के इस निरीह किसान का शोषण कर रहे हैं और कैसे गाँव के ही महाजन और पुरोहित उनकी सहायता कर रहे हैं, गोदान में ये सभी तत्व नखदर्पण के समान प्रत्यक्ष हो गए हैं। गोदान वास्तव में २०वीं शताब्दी की तीसरी और चौथी दशाब्दियों के भारत का ऐसा सजीव चित्र है, जैसा हमें अन्यत्र मिलना दुर्लभ है।गोदान में बहुत सी बातें कही गई हैं। जान पड़ता है प्रेमचंद ने अपने संपूर्ण जीवन के व्यंग और विनोद, कसक और वेदना, विद्रोह और वैराग्य, अनुभव और आदर्श् सभी को इसी एक उपन्यास में भर देना चाहा है। कुछ आलोचकों को इसी कारण उसमें अस्तव्यस्तता मिलती है। उसका कथानक शिथिल, अनियंत्रित और स्थान-स्थान पर अति नाटकीय जान पड़ता है। ऊपर से देखने पर है भी ऐसा ही है, परंतु सूक्ष्म रूप से देखने पर गोदान में लेखक का अद्भुत उपन्यास-कौशल दिखाई पड़ेगा क्योंकि उन्होंने जितनी बातें कहीं हैं वे सभी समुचित उत्थान में कहीं गई हैं। प्रेमचंद ने एक स्थान पर लिखा है - 'उपन्यास में आपकी कलम में जितनी शक्ति हो अपना जोर दिखाइए, राजनीति पर तर्क कीजिए, किसी महफिल के वर्णन में १०-२० पृष्ठ लिख डालिए (भाषा सरस होनी चाहिए), कोई दूषण नहीं।' प्रेमचंद ने गोदान में अपनी कलम का पूरा जोर दिखाया है। सभी बातें कहने के लिये उपयुक्त प्रसंगकल्पना, समुचित तर्कजाल और सही मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रवाहशील, चुस्त और दुरुस्त भाषा और वणर्नशैली में उपस्थित कर देना प्रेमचंद का अपना विशेष कौशल है और इस दृष्टि से उनकी तुलना में शायद ही किसी उपन्यास लेखक को रखा जा सकता है।

परिचय

जिस समय प्रेमचन्द का जन्म हुआ वह युग सामाजिक-धार्मिक रुढ़िवाद से भरा हुआ था। इस रुढ़िवाद से स्वयं प्रेमचन्द भी प्रभावित हुए। जब अपने कथा-साहित्य का सफर शुरु किया अनेकों प्रकार के रुढ़िवाद से ग्रस्त समाज को यथाशक्ति कला के शस्त्र द्वारा मुक्त कराने का संकल्प लिया। अपनी कहानी के बालक के माध्यम से यह घोषणा करते हुए कहा कि "मैं निरर्थक रूढ़ियों और व्यर्थ के बन्धनों का दास नहीं हूँ।"प्रेमचन्द और शोषण का बहुत पुराना रिश्ता माना जा सकता है। क्योंकि बचपन से ही शोषण के शिकार रहे प्रेमचन्द इससे अच्छी तरह वाकिफ हो गए थे।[1] समाज में सदा वर्गवाद व्याप्त रहा है। समाज में रहने वाले हर व्यक्ति को किसी न किसी वर्ग से जुड़ना ही होगा।प्रेमचन्द ने वर्गवाद के खिलाफ लिखने के लिए ही सरकारी पद से त्यागपत्र दे दिया। वह इससे सम्बन्धित बातों को उन्मुख होकर लिखना चाहते थे। उनके मुताबिक वर्तमान युग न तो धर्म का है और न ही मोक्ष का। अर्थ

ही इसका प्राण बनता जा रहा है। आवश्यकता के अनुसार अर्थोपार्जन सबके लिए अनिवार्य होता जा रहा है। इसके बिना जिन्दा रहना सर्वथा असंभव है।वह कहते हैं कि समाज में जिन्दा रहने में जितनी कठिनाइयों का सामना लोग करेंगे उतना ही वहाँ गुनाह होगा। अगर समाज में लोग खुशहाल होंगे तो समाज में अच्छाई ज्यादा होगी और समाज में गुनाह नहीं के बराबर होगा। प्रेमचन्द ने शोषितवर्ग के लोगों को उठाने का हर संभव प्रयास किया। उन्होंने आवाज लगाई "ए लोगों जब तुम्हें संसार में रहना है तो जिन्दों की तरह रहो, मुर्दों की तरह जिन्दा रहने से क्या फायदा।"प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों में शोषक-समाज के विभिन्न वर्गों की करतूतों व हथकण्डों का पर्दाफाश किया है। उपन्यास वे ही उच्च कोटि के समझे जाते हैं जिनमें आदर्श तथा यथार्थ का पूर्ण सामंजस्य हो। 'गोदान' में समान्तर रूप से चलने वाली दोनो कथाएं हैं - एक ग्राम्य कथा और दूसरी नागरी कथा, लेकिन इन दोनो कथाओं में परस्पर सम्बद्धता तथा सन्तुलन पाया जाता है। ये दोनो कथाएं इस महाकाव्य की दुर्बलता नहीं वरन, सशक्त विशेषता है।यदि हमें तत्कालीन समय के भारत वर्ष को समझना है तो हमें निश्चित रूप से गोदान को पढना चाहिए इसमें देश-काल की परिस्थितियों का सटीक वर्णन किया गया है। कथा नायक होरी की वेदना पाठको के मन में गहरी संवेदना भर देती है। संयुक्त परिवार के विघटन की पीड़ा होरी को तोड़ देती है परन्तु गोदान की इच्छा उसे जीवित रखती है और वह यह इच्छा मन में लिए ही वह इस दुनिया से कूच कर जाता है।गोदान औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत किसान का महाजनी व्यवस्था में चलने वाले निरंतर शोषण तथा उससे उत्पन्न संत्रास की कथा है। गोदान का नायक होरी एक किसान है जो किसान वर्ग के प्रतिनिधि के तौर पर मौजूद है। 'आजीवन दुर्धर्ष संघर्ष के बावजूद उसकी एक गाय की आकांक्षा पूर्ण नहीं हो पाती'। [2]गोदान भारतीय कृषक जीवन के संत्रासमय संघर्ष की कहानी है।'गोदान' होरी की कहानी है, उस होरी की जो जीवन भर मेहनत करता है, अनेक कष्ट सहता है, केवल इसलिए कि उसकी मर्यादा की रक्षा हो सके और इसीलिए वह दूसरों को प्रसन्न रखने का प्रयास भी करता है, किंतु उसे इसका फल नहीं मिलता और अंत में मजबूर होना पड़ता है, फिर भी अपनी मर्यादा नहीं बचा पाता। परिणामतः वह जप-तप के अपने जीवन को ही होम कर देता है। यह होरी की कहानी नहीं, उस काल के हर भारतीय किसान की आत्मकथा है। और इसके साथ जुड़ी है शहर की प्रासंगिक कहानी। 'गोदान' में उन्होंने ग्राम और शहर की दो कथाओं का इतना यथार्थ रूप और संतुलित मिश्रण प्रस्तुत किया है। दोनों की कथाओं का संगठन इतनी कुशलता से हुआ है कि उसमें प्रवाह आद्योपांत बना रहता है। प्रेमचंद की कलम की यही विशेषता है।[3]इस रचना में प्रेमचन्द का गांधीवाद से मोहभंग साफ-साफ दिखाई पड़ता है। प्रेमचन्द के पूर्व के उपन्यासों में जहाॅ आदर्शवाद दिखाई पड़ता है, गोदान में आकर यथार्थवाद नग्न रूप में परिलक्षित होता है। कई समालोचकों ने इसे महाकाव्यात्मक उपन्यास का दर्जा भी दिया है।

विचार-विमर्श

होरी गोदान उपन्यास का नायक है। इसमें आदि से अंत तक होरी की दयनीय और संघर्षपूर्ण गाथा कही गई है । वह भारतीय कृषक वर्ग का प्रतिनिधि है, जो सदैव शोषक-वर्ग के हाथों यातना सहने को मजबूर है ।परिवार का मुखिया - बेलारी गाँव का होरी अपने परिवार का मुखिया है। उसके पास पांच बीघा जमीन है । पविार में बेटा गोबर, दो बेटियाँ सोना और रूपा तथा पत्नी धनिया हैं । वह कमर तोड़ मेहनत करके फसल उपजाता है । फिर भी उसे दो वक्त भरपेट भोजन नसीब नहीं होता। अपनी आवश्कयताओं को पूरा करने के लिए उसे समय- समय पर महाजनों से कर्ज लेना पड़ता है। हालांकि वह जानता है कि इस अंधी गली से छुटकारा पाना मुश्किल है, फिर भी परिस्थिति से लाचार बन जाता है। वह सोचता है कि अगर दोनों भाई अलग न हुए होते तो, आज उसके खेत में भी हल चल रहे होते। उसके बच्चों को दूध मिलता। धनिया की जवानी असमय न ढल गई होती। धनिया जब गोहत्या का दोष देकर हीरा की तौहीन करता है, तो भाई की इज्जत बचाने होरी बेटे के सिर पर हाथ रखकर सफेद झूठ बोल देता है। पुलिस की तलाशी लेने को वह घर की बेइज्जती समझता है। इसलिए कर्जा लेकर दरोगा को रिश्वत देने को तैयार हो जाता है। हीरा गाँव छोड़कर चला जाता है तो होरी उसकी खेती कमाता है । वह इसे अपना धर्म मानकर काम करता जाता है। बेटा भाग जाने पर भी बहू झु निया को अपने घर पर रखकर उसके कारण समाज में उठे बवंडर का मुकाबला करता है।[4]

व्यवहारकुशल - होरी रायसाहब के यहाँ बराबर आता-जाता रहता है ताकि उनकी शुभ - दृष्टि उस पर बनी रहे । उनसे मिलने में वह गर्व का अनुभव करता रहता है । वह सोचता है - मालिकों से मिलते -जुलते रहने का ही तो यह प्रसाद है कि सब उसका आदर करते हैं, नहीं तो पांच बीघे के किसान की औकात क्या है ?किसी भी समय जरूरत पड़ जाने पर कर्जा मिल सके, इसलिए वह महाजनों से अच्छा संबंध बनाए रखता है । वह साहूकारों से हँसी-मजाक करके कर्जे देनो को फुसलाता है । वह पटेश्वरी और साहूकार की खुशामद करता है तो वसूली के तकाजे नरम पड़ जाते हैं और पुराना कर्ज रहने पर भी नया कर्ज मिल जाता है । होरी रायसाहब के नाटक धनुष यज्ञ में माली की भूमिका में अभिनय करके सबको खुश कर देता है । वह पठान के वेष में आए मेहता को अपने काबू में इसलिए ले जाता है कि वह रायसाहब को सुरक्षा दे सके ।गरीब - होरी बहुत गरीब है । गरीबी ने उसकी रीढ़ तोड़ दी है । दवादारु न हो सकने से उसके तीन लड़के बचपन में ही मर गए थे । उसके सोलह साल के लड़के गोबर के लिए दूध तक नहीं मिल सका था । लगभग चालीस साल की उम्र में उसके गिरते स्वास्थ्य की ओर संकेत करते हुए धनिया कहती है -तुम्हारी दशा देखकर मैं सूखी जाती हूँ कि भगवान यह बुढ़ापा कैसे कटेगा ? किसके द्वार पर भीख मांगेंगे । होरी कहता है - साठे तक पहुँचने की नौबत न आ पाएगी धनिया ।

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

इसके पहले ही चल देंगे ।वह जब पुनिया के मटर के खेत की मेंड पर अपनी मडैया में रात को सोने जाता है, तो अपने साथ जन्म के पहले के कंबल और पांच साल पहले बनवाई गई फटी मिर्जई ले जाता है, फिर भी बुढ़ापे का साथी था विवाई के फटे पैरों को पेट में डाल कर और हाथों को जाँघों के बीच में दबाकर और कंवल से मुँह चिपाकर अपनी गर्म साँस से अपने को गर्म करने की चेष्टा करता है।किसान से मजदूर बन जाना उसके जीवन की सबसे बड़ी दर्दनाक मजबूरी थी। मातादीन के यहाँ वह मजदूरी करते समय उसकी झिड़कियाँ सहता है। वह काम करते समय बेहोश भी हो जाता है। ठेकेदार के यहाँ पत्थर की खुदाई करते समय उसे लू लग जाती है। जो उसके जीवन का अंत कर देती है। जीवन संघर्ष में बार-बार हारने के बावजूद वह हिम्मत नहीं हारता, बल्कि भाग्य से लड़ता रहता है।[5]

खेती की मर्यादा का रक्षक - होरी आदर्श कृषक है । हर हालत में किसानी को मर्यादाजनक कार्य मानता है । वह जानता है कि खेती करने से उसके एक दिन की मजदूरी एक आने से भी कम होती है । फिर भी अपनी मर्यादा को बनाए रखने के लिए वह खेती में डटकर रहना चाहता है । उसके लिए संघर्ष करता है । वह पुत्र गोबर से कहता है - "खेती में जो मरजाद है, वह नौकरी में नहीं है ।भ्रातृप्रेम में महान - अलग हो जाने पर भी होरी अपने दोनों भाई हीरा और शोभा से प्रेम करता है । सब जब उसके घर पर गाय देखने आते हैं, वह चाहता है कि उसके दोनों भाई भी गाय देखने आ जाएँ । हीरा उस पर झूठा आरोप लगाता है कि उसने घर के पैसों का गबन किया है । हीरा उसकी गाय को मार डालता है, फिर भी भाई को बचाने के लिए वह कहता है - मेरा सुबहा किसी पर नहीं है, सरकार । गाय अपनी मौत से मरी है । बूढ़ी हो गई थी वह भाई के लिए झूठ बोलता है कि हीरा ने गाय को नहीं मारा। हीरा भाग जाता है तो वह दु:खी होता है। उसके परिवार का भार संभालता है। साढ़े पांच साल बाद जब हीरा लौटकर अपनी राम कहानी सुनाकर भाई से माफी मांगता है, तब होरी को बेहद खुशी होती है।[6]

उदार पिता - होरी एक आदर्श पिता है। वह हर समय बच्चों का खयाल रखता है। वह सोचता है - गोबर को यदि दूध मिल पाता तो कितना अच्छा जवान बन जाता। गोबर घर छोड़कर चला जाता है। अपने मन में पुत्र के प्रति कोई दुर्भावना नहीं है। वह नोहरी से दो सौ रुपये कर्जा लेकर सोना की शादी कर देता है। मजबूरी में दो सौ रुपये लेकर रामसेवक से रूपा की शादी कर देता है।सीधासादा आदमी - होरी स्वभाव से सरल है । वह छल-छेद की उड़ती हुई धूल से दूर रहता है। वह किसी के जलते हुए घर में हाथ सेंकना नहीं जानता। भोला के पास भूसा न होने की बात सुनकर बह बिदक जाता है। वह गाय की रस्सी भोला को लौटाते हुए कहता है - रुपया तो दादा मेरे पास नहीं । हाँ थोड़ा-सा भूसा बचा है। वह तुम्हें दूँगा। चलकर उठवा लो। भूसे के लिए तुम गाय बेचोगे और मैं लूँगा। मेरे हाथ न कट जायेंगे। अपने घर में भूसे की कमी होने के बावजूद वह भोला के घर पर तीन खौंचा भूसा पहुँचा देता है।यथार्थ चरित्र- समस्त गुण-दोषों को लेकर एक यथार्थ चरित्र के रूप में होरी पाठकों के सामने आता है। कुछ फायदों के लिए होरी सामान्य आदमी की तरह कुछ भूल कर बैठता है।वह भोला को सगाई का झूठा आश्वासन देकर गाय हथियाना चाहता है। फिर भी उसकी आत्मा उसे धिक्कारती है। वह कहता है - " किसी भाई का नीलाम पर चढ़ा हुआ बैल लेने में जो पाप है, वह इस समय तुम्हारी गाय लेने में है। होरी समझता था कि संकट की चीज लेना पाप है।[7]

वह सोचता है कि अगर वह समय पर भोला के पैसे चुका नहीं सका, तो भोला तगादा करने आएगा, बिगड़ेगा, गालियाँ देगा । इससे उसे शर्म नहीं आएगी। उसे लगता है कि सिद्धि के लिए थोड़ा-सा छल करना जायज है। वह मानता है कि अपने पास कुछ पैसे होने पर भी महाजन से झूठ कहना, बेचते समय सन को गीला करना, रूई में बिनौले भरना आदि दरिद्रता की मजबूरियाँ हैं और ये बुरी बातें नहीं हैं।होरी बाँस बेचते समय अपने भाई से ढाई रुपये की बेइमानी करने के लिए दमड़ी बंसोर से सांठ- गांठ कर लेता है। आखिर चौधरी वह दलाली के पैसे न देकर साढ़े सात रुपए होरी के हाथ थमाकर कहता है -"ढाई रुपये पर अपना ईमान बिगाड़ रहे थे। मुझे उपदेश देते हैं। अभी परदा खोल दूं तो सिर नीचा हो जाए।" इस घटना से होरी बहुत पछताता है। वह कितना लोभी और स्वार्थी है, आज पता चला।भाग्यवादी - होरी भाग्य और कर्म पर अखंड विश्वास रखता है। वह मानता है कि उसकी गरीबी और दुःख -दुर्दशा सभी पूर्व जन्म के पाप का फल है । सब प्रकार का सुख भोग रायसाहब के पूर्वजन्म के पुण्य का फल है। पाखंडी दातादीन का होरी इसलिए सम्मान करता है कि वह ब्राह्मण है। ब्याज की दर अधिक जानते हुए भी वह कर्जे की पाई-पाई चुका देना चाहता है। उसका दृढ़ विश्वास है कि ब्राह्मण का पैसा हरगिज नहीं पचेगा।वह ब्राह्मण और पंचों को ईश्वर के प्रतिनिधि मानकर उनके अनुचित फैसले को सिर झुका कर मान लेता है। इसलिए वह खलिहान का सारा अन्न दण्ड के रूप में दे देता है। वह कहता है "पंच में परमेश्वर रहते हैं। उसका जो न्याय है वह सिर आँखों पर।"[6]

भोला जब उसके घर से बैल खोलकर ले जाने लगता है और सभी गाँववाले होरी के पक्ष में तर्क रखते हैं, तब होरी कहता है - "अगर तुम्हारा धर्म कहे तो बैल खोल लो।" सचमुच भोला बैल ले जाता है इसे भाग्य का विधान मानकर होरी सहने को विवश हो जाता है।वह बेटे गोबर को समझा देता है कि छोटे-बड़े भगवान के घर से बनकर आते हैं। संपत्ति बड़ी तपस्या से मिलती है।कर्ज के शोषण से घायल - कर्जा तो मुँह बाये होरी को निगल जाने को सतत तैयार रहता है। उसके साहूकार हैं - दातादीन, मंगरू, साहुआइन, नोहरी, रामस्वरूप। बिरादरी में नाक न कटे इसलिए अपनी औकात के हिसाब से वह सामाजिक कार्यों में खर्च करता है। भाइयों से अलग

IJMRSETM

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

होते समय उसने जो कर्जा लिया था, वह बढ़ता जाता है । उसने दातादीन से तीस रुपए लेकर आलू बोए थे। आलू चोर ले गए। अब कर्जा ब्याज सहित दो सौ रुपए हैं । वह सोचता है इस तरह सूद बढ़ता जाएगा तो उसका घर द्वार सब नीलाम हो जाएगा। वह मजदूरी से एक अधेड़ रामसेवक से रूपा की शादी करके दो सौ रुपये लेता है। उसे बाद में चुकाने को मन बना लेता है फिर भी इस कार्य से उसकी अंतरात्मा विलाप करती है।[5]

धर्म की मर्यादा का रक्षक - राय साहब गोचर के लिए चारागाह छोड़ देते हैं तो होरी उन्हें प्रजापालक मानता है। वह स्वयं धर्म की मर्यादा की रक्षा करने के लिए बहू झुनिया को घर में रखकर सारी कठिनाइयाँ झेलता है, पर उसे घर से निकालने को तैयार नहीं होता। बिरादरी की मर्यादा की रक्षा करने के लिए वह सारा गल्ला सिर पर ढोकर पंचों को दे देता है। वह मकान को गिरवी रखकर दंड भरता है।मातादीन जब सिलिया का परित्याग कर देता है, होरी उसे शरण देता है। वह मानवता का आँचल कभी नहीं छोड़ता, चाहे उसके लिए उसे कितनी ही विपत्ति क्यों न सहनी पड़े। होरी धनिया की फटकार सहता है । पुत्र का व्यंग्य - बाण सहता है। महाजन की गालियाँ, मालिक की धमकियाँ सब कुछ सहकर वीर योद्धा की तरह जीवन संग्राम में लड़ता है। अंत में वह मिट जाता है। उसकी हार हार नहीं है, कर्म के लिए प्रेरणा है। वह मर जाता है पर मरकर अमर हो जाता है। सामाजिक व्यवस्था और आर्थिक तंगी उसे मिलकर लहू-लुहान कर देती है। फिर भी एक कृषक के रूप में अपना अस्तित्व बनाए रखने में वह आप्राण प्रयास करता है।लेखक की राय में - जीवन के सारे संकट, सारी निराशाएँ, मानो उसके चरणों पर लोट रही थीं। कौन कहता, जीवन -संग्राम में वह हारा है। यह उल्लास, यह हर्ष, यह पुलक क्या हार के लक्षण हैं। इन्हीं हारों में उसकी विजय है। उसके टूटे-फूटे वस्त्र उसकी विजय पताकाएँ हैं। होरी अकेले में पलायनवादी लगता है, विरोधी मनोवृत्ति वाला लगता है, अपने निर्णय बदलते हुए दिखाई देता है। वह अपने आप में अधूरा लगता है। पर उसके चरित्र को धनिया पूर्णता देती है। पति-पत्नी मिलकर वह पूर्ण व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करते हैं।[4]

परिणाम

होरीराम ने दोनों बैलों को सानी-पानी देकर अपनी स्त्री धनिया से कहा -- गोबर को ऊख गोड़ने भेज देना। मैं न जाने कब लौटूँ। ज़रा मेरी लाठी दे दे।धनिया के दोनों हाथ गोबर से भरे थे। उपले पाथकर आयी थी। बोली -- अरे, कुछ रस-पानी तो कर लो। ऐसी जल्दी क्या है।होरी ने अपने झुर्रियों से भरे हुए माथे को सिकोड़कर कहा -- तुझे रस-पानी की पड़ी है, मुझे यह चिन्ता है कि अबेर हो गयी तो मालिक से भेंट न होगी। असनान-पूजा करने लगेंगे, तो घंटों बैठे बीत जायगा।'इसी से तो कहती हूँ, कुछ जलपान कर लो। और आज न जाओगे तो कौन हरज़ होगा। अभी तो परसों गये थे।"तू जो बात नहीं समझती, उसमें टाँग क्यों अड़ाती है भाई! मेरी लाठी दे दे और अपना काम देख। यह इसी मिलते-जुलते रहने का परसाद है कि अब तक जान बची हुई है। नहीं कहीं पता न लगता कि किधर गये। गाँव में इतने आदमी तो हैं, किस पर बेदख़ली नहीं आयी, किस पर कुड़की नहीं आयी। जब दूसरे के पाँवों-तले अपनी गर्दन दबी हुई है, तो उन पाँवों को सहलाने में ही कुशल है। 'धनिया इतनी व्यवहार-कुशल न थी। उसका विचार था कि हमने ज़मींदार के खेत जोते हैं, तो वह अपना लगान ही तो लेगा। उसकी ख़ुशामद क्यों करें, उसके तलवे क्यों सहलायें। यद्यपि अपने विवाहित जीवन के इन बीस बरसों में उसे अच्छी तरह अनुभव हो गया था कि चाहे कितनी ही कतर-ब्योंत करो, कितना ही पेट-तन काटो, चाहे एक-एक कौड़ी को दाँत से पकड़ो; मगर लगान बेबाक़ होना मुश्किल है। फिर भी वह हार न मानती थी, और इस विषय पर स्त्री-पुरुष में आये दिन संग्राम छिड़ा रहता था। उसकी छः सन्तानों में अब केवल तीन ज़िन्दा हैं, एक लड़का गोबर कोई सोलह साल का, और दो लड़कियाँ सोना और रूपा, बारह और आठ साल की। तीन लड़के बचपन ही में मर गये। उसका मन आज भी कहता था, अगर उनकी दवादारू होती तो वे बच जाते; पर वह एक धेले की दवा भी न मँगवा सकी थी। उसकी ही उम्र अभी क्या थी। छत्तीसवाँ ही साल तो था; पर सारे बाल पक गये थे, चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गयी थीं। सारी देह ढल गयी थी, वह सुन्दर गेहुआँ रंग सँवला गया था और आँखों से भी कम सूझने लगा था। पेट की चिन्ता ही के कारण तो। कभी तो जीवन का सुख न मिला। इस चिरस्थायी जीर्णावस्था ने उसके आत्म-सम्मान को उदासीनता का रूप दे दिया था। जिस गृहस्थी में पेट की रोटियाँ भी न मिलें, उसके लिए इतनी ख़ुशामद क्यों? इस परिस्थिति से उसका मन बराबर विद्रोह किया करता था। और दो चार घुड़कियाँ खा लेने पर ही उसे यथार्थ का ज्ञान होता था।उसने परास्त होकर होरी की लाठी, मिरजई, जूते, पगड़ी और तमाखू का बटुआ लाकर सामने पटक दिये।होरी ने उसकी ओर आँखें तरेर कर कहा -- क्या ससुराल जाना है जो पाँचों पोसाक लायी है? ससुराल में भी तो कोई जवान साली-सलहज नहीं बैठी है, जिसे जाकर दिखाऊँ।होरी के गहरे साँवले, पिचके हुए चेहरे पर मुस्कराहट की मृदुता झलक पड़ी। धनिया ने लजाते हुए कहा -- ऐसे ही तो बड़े सजीले जवान हो कि साली-सलहजें तुम्हें देख कर रीझ जायँगी!होरी ने फटी हुई मिरजई को बड़ी सावधानी से तह करके खाट पर रखते हुए कहा -- तो क्या तू समझती है, मैं बूढ़ा हो गया? अभी तो चालीस भी नहीं हुए। मर्द साठे पर पाठे होते हैं।'जाकर सीसे में मुँह देखो। तुम-जैसे मर्द साठे पर पाठे नहीं होते। दूध-घी अंजन लगाने तक को तो मिलता नहीं, पाठे होंगे! तुम्हारी दशा देख-देखकर तो मैं और भी सूखी जाती हूँ कि भगवान् यह बुढ़ापा कैसे कटेगा? किसके द्वार पर भीख माँगेंगे?'होरी की वह क्षणिक मृदुता यथार्थ की इस आँच में जैसे झुलस गयी। लकड़ी सँभालता हुआ बोला -- साठे तक पहुँचने की नौबत न आने पायेगी धनिया! इसके पहले ही चल देंगे।धनिया ने तिरस्कार किया -- अच्छा रहने दो, मत असुभ मुँह से निकालो। तुमसे कोई अच्छी बात भी कहे, तो लगते हो कोसने।[3]

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

होरी लाठी कन्धे पर रखकर घर से निकला, तो धनिया द्वार पर खड़ी उसे देर तक देखती रही। उसके इन निराशा-भरे शब्दों ने धनिया के चोट खाये हुए हृदय में आतंकमय कम्पन-सा डाल दिया था। वह जैसे अपने नारीत्व के सम्पूऩर् तप और व्रत से अपने पति को अभय-दान दे रही थी। उसके अन्तःकरण से जैसे आशीर्वादों का व्यूह-सा निकल कर होरी को अपने अन्दर छिपाये लेता था। विपन्नता के इस अथाह सागर में सोहाग ही वह तृण था, जिसे पकड़े हुए वह सागर को पार कर रही थी। इन असंगत शब्दों ने यथार्थ के निकट होने पर भी मानो झटका देकर उसके हाथ से वह तिनके का सहारा छीन लेना चाहा बिल्क यथार्थ के निकट होने के कारण ही उनमें इतनी वेदना-शक्ति आ गयी थी। काना कहने से काने को जो दुःख होता है, वह क्या दो आँखोंवाले आदमी को हो सकता है?होरी क़दम बढ़ाये चला जाता था। पगडंडी के दोनों ओर ऊख के पौधों की लहराती हुई हरियाली देख कर उसने मन में कहा -- भगवान् कहीं गौं से बरखा कर दें और डाँड़ी भी सुभीते से रहे, तो एक गाय ज़रूर लेगा। देशी गायें तो न दूध दें न उनके बछवे ही किसी काम के हों। बहुत हुआ तो तेली के कोल्हू में चले। नहीं, वह पछाईं गाय लेगा। उसकी ख़ूब सेवा करेगा। कुछ नहीं तो चार-पाँच सेर दूध होगा। गोबर दूध के लिए तरस-तरस कर रह जाता है। इस उमिर में न खाया-पिया, तो फिर कब खायेगा। साल-भर भी दूध पी ले, तो देखने लायक़ हो जाय। बछवे भी अच्छे बैल निकलेंगे। दो सौ से कम की गोंई न होगी। फिर, गऊ से ही तो द्वार की सोभा है। सबेरे-सबेरे गऊ के दर्शन हो जायँ तो क्या कहना। न जाने कब यह साध पूरी होगी, कब वह शुभ दिन आयेगा![2]

हर एक गृहस्थ की भाँति होरी के मन में भी गऊ की लालसा चिरकाल से संचित चली आती थी। यही उसके जीवन का सबसे बड़ा स्वप्न, सबसे बड़ी साध थी। बैंक सूद से चैन करने या ज़मीन ख़रीदने या महल बनवाने की विशाल आकांक्षाएँ उसके नन्हें-से हृदय में कैसे समातीं।जेठ का सूर्य आमों के झुरमुट में से निकलकर आकाश पर छायी हुई लालिमा को अपने रजत-प्रताप से तेज प्रदान करता हुआ ऊपर चढ़ रहा था और हवा में गमीर् आने लगी थी। दोनों ओर खेतों में काम करनेवाले किसान उसे देखकर राम-राम करते और सम्मान-भाव से चिलम पीने का निमन्त्रण देते थे; पर होरी को इतना अवकाश कहाँ था। उसके अन्दर बैठी हुई सम्मान-लालसा ऐसा आदर पाकर उसके सूखे मुख पर गर्व की झलक पैदा कर रही थी। मालिकों से मिलते-जुलते रहने ही का तो यह प्रसाद है कि सब उसका आदर करते हैं। नहीं उसे कौन पूछता? पाँच बीघे के किसान की बिसात ही क्या? यह कम आदर नहीं है कि तीन-तीन, चार-चार हलवाले महतो भी उसके सामने सिर झुकाते हैं।अब वह खेतों के बीच की पगडंडी छोड़कर एक खलेटी में आ गया था, जहाँ बरसात में पानी भर जाने के कारण तरी रहती थी और जेठ में कुछ हरियाली नज़र आती थी। आस-पास के गाँवों की गउएँ यहाँ चरने आया करती थीं। उस समय में भी यहाँ की हवा में कुछ ताज़गी और ठंडक थी। होरी ने दो-तीन साँसें ज़ोर से लीं। उसके जी में आया, कुछ देर यहीं बैठ जाय। दिन-भर तो लू-लपट में मरना है ही। कई किसान इस गड्ढे का पट्टा लिखाने को तैयार थे। अच्छी रक़म देते थे; पर ईश्वर भला करे राय साहब का कि उन्होंने साफ़ कह दिया, यह ज़मीन जानवरों की चराई के लिए छोड़ दी गयी है और किसी दाम पर भी न उठायी जायगी। कोई स्वार्थी ज़मींदार होता, तो कहता, गायें जायँ भाड़ में, हमें रुपए मिलते हैं, क्यों छोड़ें। पर राय साहब अभी तक पुरानी मर्यादा निभाते आते हैं। जो मालिक प्रजा को न पाले, वह भी कोई आदमी है?[1]

सहसा उसने देखा, भोला अपनी गायें लिये इसी तरफ़ चला आ रहा है। भोला इसी गाँव से मिले हुए पुरवे का ग्वाला था और दूध-मक्खन का व्यवसाय करता था। अच्छा दाम मिल जाने पर कभी-कभी किसानों के हाथ गायें बेच भी देता था। होरी का मन उन गायों को देख कर ललचा गया। अगर भोला वह आगेवाली गाय उसे दे तो क्या कहना! रुपए आगे पीछे देता रहेगा। वह जानता था घर में रुपए नहीं हैं, अभी तक लगान नहीं चुकाया जा सका, बिसेसर साह का देना भी बाक़ी है, जिस पर आने रुपए का सूद चढ़ रहा है; लेकिन दरिद्रता में जो एक प्रकार की अदूरदर्शिता होती है, वह निर्लज्जता जो तक़ाज़े, गाली और मार से भी भयभीत नहीं होती, उसने उसे प्रोत्साहित किया। बरसों से जो साध मन को आन्दोलित कर रही थी, उसने उसे विचलित कर दिया। भोला के समीप जाकर बोला -- राम-राम भोला भाई, कहो क्या रंग-ढंग है। सुना अबकी मेले से नयी गायें लाये हो।भोला ने रूखाई से जवाब दिया। होरी के मन की बात उसने ताड़ ली थी -- हाँ, दो बछियें और दो गायें लाया। पहलेवाली गायें सब सूख गयी थीं। बँधी पर दूध न पहुँचे तो गुज़र कैसे हो। होरी ने आनेवाली गाय के पुट्ठे पर हाथ रखकर कहा -- दुधार तो मालूम होती है। कितने में ली ?

भोला ने शान जमायी -- अबकी बाज़ार बड़ा तेज़ रहा महतो, इसके अस्सी रुपए देने पड़े। आँखें निकल गयीं। तीस-तीस रुपए तो दोनों कलोरों के दिये। तिस पर गाहक रुपए का आठ सेर दूध माँगता है।[2]

'बड़ा भारी कलेजा है तुम लोगों का भाई, लेकिन फिर लाये भी तो वह माल कि यहाँ दस-पाँच गाँवों में तो किसी के पास निकलेगी नहीं। 'भोला पर नशा चढ़ने लगा। बोला -- राय साहब इसके सौ रुपए देते थे। दोनों कलोरों के पचास-पचास रुपए, लेकिन हमने न दिये। भगवान् ने चाहा, तो सौ रुपए इसी ब्यान में पीट लूँगा।' इसमें क्या सन्देह है भाई ! मालिक क्या खाके लेंगे। नज़राने में मिल जाय, तो भले ले लें। यह तुम्हीं लोगों का गुदार् है कि अँजुली-भर रुपए तक़दीर के भरोसे गिन देते हो। यही जी चाहता है कि इसके दरसन करता रहूँ। धन्य है तुम्हारा जीवन कि गउओं की इतनी सेवा करते हो। हमें तो गाय का गोबर भी मयस्सर नहीं। गिरस्त के घर में एक गाय भी न हो, तो कितनी लज्जा की बात है। साल-के-साल बीत जाते हैं, गोरस के दरसन नहीं होते। घरवाली बार-बार कहती है, भोला भैया से क्यों नहीं कहते। मैं कह देता हूँ, कभी मिलेंगे तो कहूँगा। तुम्हारे सुभाव से बड़ी परसन रहती है। कहती है, ऐसा मर्द

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

ही नहीं देखा कि जब बातें करेंगे, नीची आँखें करके, कभी सिर नहीं उठाते। 'भोला पर जो नशा चढ़ रहा था, उसे इस भरपूर प्याले ने और गहरा कर दिया। बोला -- भला आदमी वही है, जो दूसरों की बहू-बेटी को अपनी बहू-बेटी समझे। जो दुष्ट किसी मेहरिया की ओर ताके, उसे गोली मार देना चाहिए।'यह तुमने लाख रुपये की बात कह दी भाई। बस सज्जन वही, जो दूसरों की आबरू को अपनी आबरू समझे। [3]'

'जिस तरह मर्द के मर जाने से औरत अनाथ हो जाती है, उसी तरह औरत के मर जाने से मर्द के हाथ-पाँव टूट जाते हैं। मेरा तो घर उजड़ गया महतो, कोई एक लोटा पानी देनेवाला भी नहीं। 'गत वर्ष भोला की स्त्री लू लग जाने से मर गयी थी। यह होरी जानता था, लेकिन पचास बरस का खंखड़ भोला भीतर से इतना स्निग्ध है, वह न जानता था। स्त्री की लालसा उसकी आँखों में सजल हो गयी थी। होरी को आसन मिल गया। उसकी व्यावहारिक कृषक-बुद्धि सजग हो गयी।'पुरानी मसल झूठी थोड़ी है -- बिन घरनी घर भूत का डेरा। कहीं सगाई नहीं ठीक कर लेते? "ताक में हूँ महतो, पर कोई जल्दी फँसता नहीं। सौ-पचास ख़रच करने को भी तैयार हूँ। जैसी भगवान् की इच्छा। "अब मैं भी फ़िर्क में रहूँगा। भगवान् चाहेंगे, तो जल्दी घर बस जायगा। "बस यही समझ लो कि उबर जाऊँगा भैया! घर में खाने को भगवान् का दिया बहुत है। चार पसेरी रोज़ दूध हो जाता है, लेकिन किस काम का। "मेरे ससुराल में एक मेहरिया है। तीन-चार साल हुए, उसका आदमी उसे छोड़-कर कलकत्ते चला गया। बेचारी पिसाई करके गुज़र कर रही है। बाल-बच्चा भी कोई नहीं। देखने-सुनने में अच्छी है। बस, लच्छमी समझ लो। '[4]

भोला का सिकुड़ा हुआ चेहरा जैसे चिकना गया। आशा में कितनी सुधा है। बोला -- अब तो तुम्हारा ही आसरा है महतो! छुट्टी हो, तो चलो एक दिन देख आयें।'मैं ठीक-ठाक करके तब तुमसे कहूँगा। बहुत उतावली करने से भी काम बिगड़ जाता है। "जब तुम्हारी इच्छा हो तब चलो। उतावली काहे की। इस कबरी पर मन ललचाया हो, तो ले लो। "यह गाय मेरे मान की नहीं है दादा। मैं तुम्हें नुक़सान नहीं पहुँचाना चाहता। अपना धरम यह नहीं है कि मित्रों का गला दबायें। जैसे इतने दिन बीते हैं, वैसे और भी बीत जायेंगे। "तुम तो ऐसी बातें करते हो होरी, जैसे हम-तुम दो हैं। तुम गाय ले जाओ, दाम जो चाहे देना। जैसे मेरे घर रही, वैसे तुम्हारे घर रही। अस्सी रुपए में ली थी, तुम अस्सी रुपये ही दे देना। जाओ। "लेकिन मेरे पास नगद नहीं है दादा, समझ लो। "तो तुमसे नगद माँगता कौन है भाई!'होरी की छाती गज़-भर की हो गयी। अस्सी रुपए में गाय मँहगी न थी। ऐसा अच्छा डील-डौल, दोनों जून में छः-सात सेर दूध, सीधी ऐसी कि बच्चा भी दुह ले। इसका तो एक-एक बाछा सौ-सौ का होगा। द्वार पर बँधेगी तो द्वार की शोभा बढ़ जायगी। उसे अभी कोई चार सौ रुपए देने थे; लेकिन उधार को वह एक तरह से मुफ़्त समझता था। कहीं भोला की सगाई ठीक हो गयी तो साल दो साल तो वह बोलेगा भी नहीं। सगाई न भी हुई, तो होरी का क्या बिगड़ता है। यही तो होगा, भोला बार-बार तगादा करने आयेगा, बिगड़ेगा, गालियाँ देगा। लेकिन होरी को इसकी ज़्यादा शर्म न थी। इस व्यवहार का वह आदी था। कृषक के जीवन का तो यह प्रसाद है। भोला के साथ वह छल कर रहा था और यह व्यापार उसकी मयार्दा के अनुकूल था। अब भी लेन-देन में उसके लिए लिखा-पढ़ी होने और न होने में कोई अन्तर न था। सूखे-बूड़े की विपदाएँ उसके मन को भी, बनाये रहती थीं। ईश्वर का रौद्र रूप सदैव उसके सामने रहता था। पर यह छल उसकी नीति में छल न था। यह केवल स्वार्थ-सिद्धि थी और यह कोई बुरी बात न थी। इस तरह का छल तो वह दिन-रात करता रहता था। घर में दो-चार रुपये पड़े रहने पर भी महाजन के सामने क़स्में खा जाता था कि एक पाई भी नहीं है। सन को कुछ गीला कर देना और रुई में कुछ बिनौले भर देना उसकी नीति में जायज था। और यहाँ तो केवल स्वार्थ न था, थोड़ा-सा मनोरंजन भी था। बुड्ढों का बुढ़भस हास्यास्पद वस्तु है और ऐसे बुड्ढों से अगर कुछ ऐंठ भी लिया जाय, तो कोई दोष-पाप नहीं।[5]

भोला ने गाय की पगहिया होरी के हाथ में देते हुए कहा -- ले जाओ महतो, तुम भी याद करोगे। ब्याते ही छः सेर दूध ले लेना। चलो, मैं तुम्हारे घर तक पहुँचा दूँ। साइत तुम्हें अनजान समझकर रास्तों में कुछ दिक करे। अब तुमसे सच कहता हूँ, मालिक नब्बे रुपए देते थे, पर उनके यहाँ गउओं की क्या क़दर। मुझसे लेकर किसी हाकिम-हुक्काम को दे देते। हाकिमों को गऊ की सेवा से मतलब। वह तो ख़ून चूसना-भर जानते हैं। जब तक दूध देती, रखते, फिर किसी के हाथ बेच देते। किसके पल्ले पड़ती कौन जाने। रुपया ही सब कुछ नहीं है भैया, कुछ अपना धरम भी तो है। तुम्हारे घर आराम से रहेगी तो। यह न होगा कि तुम आप खाकर सो रहो और गऊ भूखी खड़ी रहे। उसकी सेवा करोगे, चुमकारोगे। गऊ हमें आसिरवाद देगी। तुमसे क्या कहूँ भैया, घर में चंगुल भर भी भूसा नहीं रहा। रुपए सब बाज़ार में निकल गये। सोचा था महाजन से कुछ लेकर भूसा ले लेंगे; लेकिन महाजन का पहला ही नहीं चुका। उसने इनकार कर दिया। इतने जानवरों को क्या खिलावें, यही चिन्ता मारे डालती है। चुटकी-चुटकी भर खिलाऊँ, तो मन-भर रोज़ का ख़रच है। भगवान् ही पार लगायें तो लगे।[6]

होरी ने सहानुभूति के स्वर में कहा -- तुमने हमसे पहले क्यों नहीं कहा? हमने एक गाड़ी भूसा बेच दिया।भोला ने माथा ठोककर कहा -- इसीलिए नहीं कहा भैया कि सबसे अपना दुःख क्यों रोऊँ। बाँटता कोई नहीं, हँसते सब हैं। जो गायें सूख गयी हैं उनका ग़म नहीं, पत्ती-सत्ती खिलाकर जिला लूँगा; लेकिन अब यह तो रातिब बिना नहीं रह सकती। हो सके, तो दस-बीस रुपये भूसे के लिए दे दो।किसान पक्का स्वार्थी होता है, इसमें सन्देह नहीं। उसकी गाँठ से रिश्वत के पैसे बड़ी मुश्किल से निकलते हैं, भाव-ताव में भी वह चौकस होता है, ब्याज की एक-एक पाई छुड़ाने के लिए वह महाजन की घंटों चिरौरी करता है, जब तक पक्का विश्वास न हो जाय, वह

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

किसी के फुसलाने में नहीं आता, लेकिन उसका सम्पूर्ण जीवन प्रकृति से स्थायी सहयोग है। वृक्षों में फल लगते हैं, उन्हें जनता खाती है; खेती में अनाज होता है, वह संसार के काम आता है; गाय के थन में दूध होता है, वह ख़ुद पीने नहीं जाती दूसरे ही पीते हैं; मेघों से वर्षा होती है, उससे पृथ्वी तृप्त होती है। ऐसी संगति में कुत्सित स्वार्थ के लिए कहाँ स्थान। होरी किसान था और किसी के जलते हुए घर में हाथ सेंकना उसने सीखा ही न था।भोला की संकट-कथा सुनते ही उसकी मनोवृत्ति बदल गयी। पगहिया को भोला के हाथ में लौटाता हुआ बोला -- रुपए तो दादा मेरे पास नहीं हैं, हाँ थोड़ा-सा भूसा बचा है, वह तुम्हें दूँगा। चलकर उठवा लो। भूसे के लिए तुम गाय बेचोगे, और मैं लूँगा। मेरे हाथ न कट जायेंगे?भोला ने आर्द्र कंठ से कहा -- तुम्हारे बैल भूखों न मरेंगे! तुम्हारे पास भी ऐसा कौन-सा बहुत-सा भूसा रखा है।[7]

'नहीं दादा, अबकी भूसा अच्छा हो गया था।"मैंने तुमसे नाहक़ भूसे की चर्चा की। "तुम न कहते और पीछे से मुझे मालूम होता, तो मुझे बड़ा रंज होता कि तुमने मुझे इतना ग़ैर समझ लिया। अवसर पड़ने पर भाई की मदद भाई भी न करे, तो काम कैसे चले।"मुदा यह गाय तो लेते जाओ। "अभी नहीं दादा, फिर ले लूंगा। "तो भूसे के दाम दूध में कटवा लेना। 'होरी ने दुःखित स्वर में कहा -- दाम-कौड़ी की इसमें कौन बात है दादा, मैं एक-दो जून तुम्हारे घर खा लूँ, तो तुम मुझसे दाम मांगोगे?' लेकिन तुम्हारे बैल भूखों मरेंगे कि नहीं? " भगवान् कोई-न-कोई सबील निकालेंगे ही। असाढ़ सिर पर है। कड़बी बो लूंगा। " मगर यह गाय तुम्हारी हो गई। जिस दिन इच्छा हो आकर ले जाना। " किसी भाई का नीलाम पर चढ़ा हुआ बैल लेने में जो पाप है, वह इस समय तुम्हारी गाय लेने में है। 'होरी में बाल की खाल निकालने की शक्ति होती, तो वह ख़ुशी से गाय लेकर घर की राह लेता। भोला जब नक़द रुपए नहीं माँगता तो स्पष्ट था कि वह भूसे के लिए गाय नहीं बेच रहा है, बल्कि इसका कुछ और आशय है; लेकिन जैसे पत्तों के खड़कने पर घोड़ा अकारण ही ठिठक जाता है और मारने पर भी आगे क़दम नहीं उठाता वही दसा होरी की थी। संकट की चीज़ लेना पाप है, यह बात जन्म-जन्मान्तरों से उसकी आत्मा का अंश बन गयी थी।भोला ने गद् गद कंठ से कहा -- तो किसी को भेज दूँ भूसे के लिए?[6]

होरी ने जवाब दिया-- अभी मैं राय साहब की डयोढ़ी पर जा रहा हूँ। वहाँ से घड़ी-भर में लौटूंगा, तभी किसी को भेजना।भोला की आँखों में आँसू भर आये। बोला -- तुमने आज मुझे उबार लिया होरी भाई! मुझे अब मालूम हुआ कि मैं संसार में अकेला नहीं हूँ। मेरा भी कोई हितू है। एक क्षण के बाद उसने फिर कहा -- उस बात को भूल न जाना।होरी आगे बढ़ा, तो उसका चित्त प्रसन्न था। मन में एक विचित्र स्फूर्ति हो रही थी। क्या हुआ, दस-पाँच मन भूसा चला जायगा, बेचारे को संकट में पड़ कर अपनी गाय तो न बेचनी पड़ेगी। जब मेरे पास चारा हो जायगा, तब गाय खोल लाऊँगा। भगवान् करें, मुझे कोई मेहरिया मिल जाय। फिर तो कोई बात ही नहीं।उसने पीछे फिर कर देखा। कबरी गाय पूँछ से मक्खियाँ उड़ाती, सिर हिलाती, मस्तानी, मन्द-गति से झूमती चली जाती थी, जैसे बाँदियों के बीच में कोई रानी हो। कैसा शुभ होगा वह दिन, जब यह कामधेनु उसके द्वार पर बंधेगी!

2.सेमरी और बेलारी दोनों अवध-प्रान्त के गाँव हैं। ज़िले का नाम बताने की कोई ज़रूरत नहीं। होरी बेलारी में रहता है, राय साहब अमरपाल सिंह सेमरी में। दोनों गाँवों में केवल पाँच मील का अन्तर है। पिछले सत्याग्रह-संग्राम में राय साहब ने बड़ा यश कमाया था। कौंसिल की मेम्बरी छोड़कर जेल चले गये थे। तब से उनके इलाक़े के असामियों को उनसे बड़ी श्रद्धा हो गयी थी। यह नहीं कि उनके इलाक़े में असामियों के साथ कोई ख़ास रियायत की जाती हो, या डाँड़ और बेगार की कड़ाई कुछ कम हो; मगर यह सारी बदनामी मुख़्तारों के सिर जाती थी। राय साहब की कीर्ति पर कोई कलंक न लग सकता था। वह बेचारे भी तो उसी व्यवस्था के ग़ुलाम थे। ज़ाब्ते का काम तो जैसे होता चला आया है, वैसा ही होगा। राय साहब की सज्जनता उस पर कोई असर न डाल सकती थी; इसलिए आमदनी और अधिकार में जौ-भर की भी कमी न होने पर भी उनका यश मानो बढ़ गया था। असामियों से वह हँस कर बोल लेते थे। यही क्या कम है ? सिंह का काम तो शिकार करना है; अगर वह गरजने और गुर्राने के बदले मीठी बोली बोल सकता, तो उसे घर बैठे मनमाना शिकार मिल जाता। शिकार की खोज में जंगल में न भटकना पड़ता।राय साहब राष्ट्रवादी होने पर भी हुक्काम से मेल-जोल बनाये रखते थे। उनकी नज़रें और डालियाँ और कर्मचारियों की दस्तूरियाँ जैसी की तैसी चली आती थीं। साहित्य और संगीत के प्रेमी थे, ड्रामा के शौक़ीन, अच्छे वक्ता थे, अच्छे लेखक, अच्छे निशाने-बाज़। उनकी पत्नी को मरे आज दस साल हो चुके थे; मगर दूसरी शादी न की थी। हँस-बोलकर अपने विधुर जीवन को बहलाते रहते थे।होरी ड्योढ़ी पर पहुँचा तो देखा जेठ के दशहरे के अवसर पर होनेवाले धनुष-यज्ञ की बड़ी ज़ोरों से तैयारियाँ हो रही हैं। कहीं रंग-मंच बन रहा था, कहीं मंडप, कहीं मेहमानों का आतिथ्य-गृह, कहीं दूकानदारों के लिए दूकानें। धूप तेज़ हो गयी थी; पर राय साहब ख़ुद काम में लगे हुए थे। अपने पिता से सम्पत्ति के साथ-साथ उन्होंने राम की भक्ति भी पायी थी और धनुष-यज्ञ को नाटक का रूप देकर उसे शिष्ट मनोरंजन का साधन बना दिया था। इस अवसर पर उनके यार-दोस्त, हाकिम-हुक्काम सभी निमंत्रित होते थे। और दो-तीन दिन इलाक़े में बड़ी चहल-पहल रहती थी। राय साहब का परिवार बहुत विशाल था। कोई डेढ़ सौ सरदार एक साथ भोजन करते थे। कई चचा थे, दरजनों चचेरे भाई, कई सगे भाई, बीसियों नाते के भाई। एक चचा साहब राधा के अनन्य उपासक थे और बराबर वृन्दाबन में रहते थे। भक्ति-रस के कितने ही कविता रच डाले थे और समय-समय पर उन्हें छपवाकर दोस्तों की भेंट कर देते थे। एक दूसरे चचा थे, जो राम के परमभक्त थे और फ़ारसी-भाषा में रामायण का अनुवाद कर रहे थे। रियासत से सबके वसीके बँधे हुए थे। किसी को कोई काम करने की ज़रूरत न थी।[5]

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

होरी मंडप में खड़ा सोच रहा था कि अपने आने की सूचना कैसे दे कि सहसा राय साहब उधर ही आ निकले और उसे देखते ही बोले --अरे ! तू आ गया होरी, मैं तो तुझे बुलवानेवाला था। देख, अबकी तुझे राजा जनक का माली बनना पड़ेगा। समझ गया न, जिस वक़्त जानकी जी मन्दिर में पूजा करने जाती हैं, उसी वक़्त तू एक गुलदस्ता लिये खड़ा रहेगा और जानकी जी की भेंट करेगा। ग़लती न करना और देख, असामियों से ताकीद करके कह देना कि सब-के-सब शगुन करने आयें। मेरे साथ कोठी में आ, तुझसे कुछ बातें करनी हैं। वह आगे-आगे कोठी की ओर चले, होरी पीछे-पीछे चला। वहीं एक घने वृक्ष की छाया में एक कुरसी पर बैठ गये और होरी को ज़मीन पर बैठने का इशारा करके बोले -- समझ गया, मैंने क्या कहा। कारकुन को तो जो कुछ करना है, वह करेगा ही, लेकिन असामी जितने मन से असामी की बात सुनता है, कारकुन की नहीं सुनता। हमें इन्हीं पाँच-सात दिनों में बीस हज़ार का प्रबन्ध करना है। कैसे होगा, समझ में नहीं आता। तुम सोचते होगे, मुझ टके के आदमी से मालिक क्यों अपना दुखड़ा ले बैठे। किससे अपने मन की कहूँ ? न जाने क्यों तुम्हारे ऊपर विश्वास होता है। इतना जानता हूँ कि तुम मन में मुझ पर हँसोगे नहीं। और हँसो भी, तो तुम्हारी हँसी मैं वरदाश्त कर सकूँगा। नहीं सह सकता उनकी हँसी, जो अपने बराबर के हैं, क्योंकि उनकी हँसी में ईर्ष्या, व्यंग और जलन है। और वे क्यों न हँसेंगे। मैं भी तो उनकी दुर्दशा और विपत्ति और पतन पर हँसता हूँ, दिल खोलकर, तालियाँ बजाकर। सम्पत्ति और सहृदयता में वैर है। हम भी दान देते हैं, धर्म करते हैं। लेकिन जानते हो, क्यों ? केवल अपने बराबरवालों को नीचा दिखाने के लिए। हमारा दान और धर्म कोरा अहंकार है, विशुद्ध अहंकार। हम में से किसी पर डिग्री हो जाय, कुर्क़ी आ जाय, बक़ाया मालगुज़ारी की इल्लत में हवालात हो जाय, किसी का जवान बेटा मर जाय, किसी की विधवा बहू निकल जाय, किसी के घर में आग लग जाय, कोई किसी वेश्या के हाथों उल्लू बन जाय, या अपने असामियों के हाथों पिट जाय, तो उसके और सभी भाई उस पर हँसेंगे, बग़लें बजायेंगे, मानो सारे संसार की सम्पदा मिल गयी है। और मिलेंगे तो इतने प्रेम से, जैसे हमारे पसीने की जगह ख़ून बहाने को तैयार हैं। अरे, और तो और, हमारे चचेरे, फुफेरे, ममेरे, मौसेरे भाई जो इसी रियासत की बदौलत मौज उड़ा रहे हैं, कविता कर रहे हैं और जुए खेल रहे हैं, शराबें पी रहे हैं और ऐयाशी कर रहे हैं, वह भी मुझसे जलते हैं, और आज मर जाऊँ तो घी के चिराग़ जलायें। मेरे दुःख को दुःख समझनेवाला कोई नहीं। उनकी नज़रों में मुझे दुखी होने का कोई अधिकार ही नहीं है। मैं अगर रोता हूँ, तो दुःख की हँसी उड़ाता हूँ। मैं अगर बीमार होता हूँ, तो मुझे सुख होता है। मैं अगर अपना ब्याह करके घर में कलह नहीं बढ़ाता तो यह मेरी नीच स्वार्थपरता है; अगर ब्याह कर लूँ, तो वह विलासान्धता होगी। अगर शराब नहीं पीता तो मेरी कंजूसी है। शराब पीने लगूँ, तो वह प्रजा का रक्त होगा। अगर ऐयाशी नहीं करता, तो अरसिक हूँ, ऐयाशी करने लगूँ, तो फिर कहना ही क्या। इन लोगों ने मुझे भोग-विलास में फँसाने के लिए कम चालें नहीं चलीं और अब तक चलते जाते हैं। उनकी यही इच्छा है कि मैं अन्धा हो जाऊँ और ये लोग मुझे लूट लें, और मेरा धर्म यह है कि सब कुछ देखकर भी कुछ न देखूँ। सब कुछ जानकर भी गधा बना रहूँ।राय साहब ने गाड़ी को आगे बढ़ाने के लिए दो बीड़े पान खाये और होरी के मुँह की ओर ताकने लगे, जैसे उसके मनोभावों को पढ़ना चाहते हों।होरी ने साहस बटोरकर कहा -- हम समझते थे कि ऐसी बातें हमीं लोगों में होती हैं, पर जान पड़ता है, बड़े आदमियों में उनकी कमी नहीं है।[4]

राय साहब ने मुँह पान से भरकर कहा -- तुम हमें बड़ा आदमी समझते हो ? हमारे नाम बड़े हैं, पर दर्शन थोड़े। ग़रीबों में अगर ईर्ष्या या वैर है तो स्वार्थ के लिए या पेट के लिए। ऐसी ईर्ष्या और वैर को मैं क्षम्य समझता हूँ। हमारे मुँह की रोटी कोई छीन ले तो उसके गले में उँगली डालकर निकालना हमारा धर्म हो जाता है। अगर हम छोड़ दें, तो देवता हैं। बड़े आदमियों की ईर्ष्या और वैर केवल आनन्द के लिए है। हम इतने बड़े आदमी हो गये हैं कि हमें नीचता और कुटिलता में ही निःस्वार्थ और परम आनन्द मिलता है। हम देवतापन के उस दर्जे पर पहुँच गये हैं जब हमें दूसरों के रोने पर हँसी आती है। इसे तुम छोटी साधना मत समझो। जब इतना बड़ा कुटुम्ब है, तो कोई-न-कोई तो हमेशा बीमार रहेगा ही। और बड़े आदमियों के रोग भी बड़े होते हैं। वह बड़ा आदमी ही क्या, जिसे कोई छोटा रोग हो। मामूली ज्वर भी आ जाय, तो हमें सरसाम की दवा दी जाती है, मामूली फुंसी भी निकल आये, तो वह ज़हरबाद बन जाती है। अब छोटे सर्जन और मझोले सर्जन और बड़े सर्जन तार से बुलाये जा रहे हैं, मसीहुलमुल्क को लाने के लिए दिल्ली आदमी भेजा जा रहा है, भिषगाचार्य को लाने के लिए कलकत्ता। उधर देवालय में दुर्गापाठ हो रहा है और ज्योतिषाचार्य कुंडली का विचार कर रहे हैं और तन्त्र के आचार्य अपने अनुष्ठान में लगे हुए हैं। राजा साहब को यमराज के मुँह से निकालने के लिए दौड़ लगी हुई है। वैद्य और डाक्टर इस ताक में रहते हैं कि कब सिर में दर्द हो और कब उनके घर में सोने की वर्षा हो। और ये रुपए तुमसे और तुम्हारे भाइयों से वसूल किये जाते हैं, भाले की नोक पर। मुझे तो यही आश्चर्य होता है कि क्यों तुम्हारी आहों का दावानल हमें भस्म नहीं कर डालता; मगर नहीं, आश्चर्य करने की कोई बात नहीं। भस्म होने में तो बहुत देर नहीं लगती, वेदना भी थोड़ी ही देर की होती है। हम जौ-जौ और अंगुल-अंगुल और पोर-पोर भस्म हो रहे हैं। उस हाहाकार से बचने के लिए हम पुलिस की, हुक्काम की, अदालत की, वकीलों की शरण लेते हैं। और रूपवती स्त्री की भाँति सभी के हाथों का खिलौना बनते हैं। दुनिया समझती है, हम बड़े सुखी हैं। हमारे पास इलाक़े, महल, सवारियाँ, नौकर-चाकर, क़रज़, वेश्याएँ, क्या नहीं हैं, लेकिन जिसकी आत्मा में बल नहीं, अभिमान नहीं, वह और चाहे कुछ हो, आदमी नहीं है। जिसे दुश्मन के भय के मारे रात को नींद न आती हो, जिसके दुःख पर सब हँसें और रोनेवाला कोई न हो, जिसकी चोटी दूसरों के पैरों के नीचे दबी हो, जो भोग-विलास के नशे में अपने को बिलकुल भूल गया हो, जो हुक्काम के तलवे चाटता हो और अपने अधीनों का ख़ून चूसता हो, उसे मैं सुखी नहीं कहता। वह तो संसार का सबसे अभागा प्राणी है। साहब शिकार खेलने आयें या दौरे पर, मेरा कर्तव्य है कि उनकी दुम के पीछे लगा रहूँ। उनकी भौंहों पर शिकन पड़ी और हमारे प्राण सूखे।

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

उन्हें प्रसन्न करने के लिए हम क्या नहीं करते। मगर वह पचड़ा सुनाने लगूँ तो शायद तुम्हें विश्वास न आये। डालियों और रिश्वतों तक तो ख़ैर ग़नीमत है, हम सिजदे करने को भी तैयार रहते हैं। मुफ़्तख़ोरी ने हमें अपंग बना दिया है, हमें अपने पुरुषार्थ पर लेशमात्र भी विश्वास नहीं, केवल अफ़सरों के सामने दुम हिला-हिलाकर किसी तरह उनके कृपापात्र बने रहना और उनकी सहायता से अपनी प्रजा पर आतंक ज़माना ही हमारा उद्यम है। पिछलगुओं की ख़ुशामद ने हमें इतना अभिमानी और तुनकमिज़ाज बना दिया है कि हममें शील, विनय और सेवा का लोप हो गया है। मैं तो कभी-कभी सोचता हूँ कि अगर सरकार हमारे इलाक़े छीनकर हमें अपनी रोज़ी के लिए मेहनत करना सिखा दे तो हमारे साथ महान उपकार करे, और यह तो निश्चय है कि अब सरकार भी हमारी रक्षा न करेगी। हमसे अब उसका कोई स्वार्थ नहीं निकलता। लक्षण कह रहे हैं कि बहुत जल्द हमारे वर्ग की हस्ती मिट जानेवाली है। मैं उस दिन का स्वागत करने को तैयार बैठा हूँ। ईश्वर वह दिन जल्द लाये। वह हमारे उद्धार का दिन होगा। हम परिस्थितियों के शिकार बने हुए हैं। यह परिस्थिति ही हमारा सर्वनाश कर रही है और जब तक सम्पत्ति की यह बेड़ी हमारे पैरों से न निकलेगी, जब तक यह अभिशाप हमारे सिर पर मँडराता रहेगा, हम मानवता का वह पद न पा सकेंगे जिस पर पहुँचना ही जीवन का अन्तिम लक्ष्य है।राय साहब ने फिर गिलौरी-दान निकाला और कई गिलौरियाँ निकालकर मुँह में भर लीं। कुछ और कहने वाले थे कि एक चपरासी ने आकर कहा -- सरकार बेगारों ने काम करने से इनकार कर दिया है। कहते हैं, जब तक हमें खाने को न मिलेगा हम काम न करेंगे। हमने धमकाया, तो सब काम छोड़कर अलग हो गये।राय साहब के माथे पर बल पड़ गये। आँखें निकालकर बोले --चलो, मैं इन दुष्टों को ठीक करता हूँ। जब कभी खाने को नहीं दिया, तो आज यह नयी बात क्यों ? एक आने रोज़ के हिसाब से मजूरी मिलेगी, जो हमेशा मिलती रही है; और इस मजूरी पर उन्हें काम करना होगा, सीधे करें या टेढ़े।फिर होरी की ओर देखकर बोले -- तुम अब जाओ होरी, अपनी तैयारी करो। जो बात मैंने कही है, उसका ख़याल रखना। तुम्हारे गाँव से मुझे कम-से-कम पाँच सौ की आशा है।राय साहब झल्लाते हुए चले गये। होरी ने मन में सोचा, अभी यह कैसी-कैसी नीति और धरम की बातें कर रहे थे और एकाएक इतने गरम हो गये!सूर्य सिर पर आ गया था। उसके तेज से अभिभूत होकर वृक्षों ने अपना पसार समेट लिया था। आकाश पर मिटयाला गर्द छाया हुआ था और सामने की पृथ्वी काँपती हुई जान पड़ती थी।होरी ने अपना डंडा उठाया और घर चला। शगून के रुपये कहाँ से आयेंगे, यही चिन्ता उसके सिर पर सवार थी।[3]

3.होरी अपने गाँव के समीप पहुँचा, तो देखा, अभी तक गोबर खेत में ऊख गोड़ रहा है और दोनों लड़कियाँ भी उसके साथ काम कर रही हैं। लू चल रही थी, बगूले उठ रहे थे, भूतल धधक रहा था। जैसे प्रकृति ने वायु में आग घोल दिया हो। यह सब अभी तक खेत में क्यों हैं? क्या काम के पीछे सब जान देने पर तुले हुए हैं? वह खेत की ओर चला और दूर ही से चिल्लाकर बोला -- आता क्यों नहीं गोबर, क्या काम ही करता रहेगा? दोपहर ढल गया, कुछ सूझता है कि नहीं?

उसे देखते ही तीनों ने कुदालें उठा लीं और उसके साथ हो लिये। गोबर साँवला, लम्बा, एकहरा युवक था, जिसे इस काम से रुचि न मालूम होती थी। प्रसन्नता की जगह मुख पर असन्तोष और विद्रोह था। वह इसलिये काम में लगा हुआ था कि वह दिखाना चाहता था, उसे खाने-पीने की कोई फ़िक्र नहीं है। बड़ी लड़की सोना लज्जा-शील कुमारी थी, साँवली, सुडौल, प्रसन्न और चपल। गाढ़े की लाल साड़ी जिसे वह घुटनों से मोड़ कर कमर में बाँधे हुए थी, उसके हलके शरीर पर कुछ लदी हुई सी थी, और उसे प्रौढ़ता की गरिमा दे रही थी। छोटी रूपा पाँच-छः साल की छोकरी थी, मैली, सिर पर बालों का एक घोंसला-सा बना हुआ, एक लँगोटी कमर में बाँधे, बहुत ही ढीठ और रोनी।

रूपा ने होरी की टाँगों में लिपट कर कहा -- काका! देखो, मैने एक ढेला भी नहीं छोड़ा। बहन कहती है, जा पेड़ तले बैठ। ढेले न तोड़े जायँगे काका, तो मिट्टी कैसे बराबर होगी।होरी ने उसे गोद में उठाकर प्यार करते हुए कहा -- तूने बहुत अच्छा किया बेटी, चल घर चलें। कुछ देर अपने विद्रोह को दबाये रहने के बाद गोबर बोला -- यह तुम रोज़-रोज़ मालिकों की ख़ुशामद करने क्यों जाते हो? बाक़ी न चुके तो प्यादा आकर गालियाँ सुनाता है, बेगार देनी ही पड़ती है, नज़र-नज़राना सब तो हमसे भराया जाता है। फिर किसी की क्यों सलामी करो!इस समय यही भाव होरी के मन में भी आ रहे थे; लेकिन लड़के के इस विद्रोह-भाव को दबाना ज़रूरी था। बोला -- सलामी करने न जायँ, तो रहें कहाँ। भगवान् ने जब ग़ुलाम बना दिया है तो अपना क्या बस है। यह इसी सलामी की बरकत है कि द्वार पर मड़ैया डाल ली और किसी ने कुछ नहीं कहा। घूरे ने द्वार पर खूँटा गाड़ा था, जिस पर कारिन्दों ने दो रुपए डाँड़ ले लिये थे। तलैया से कितनी मिट्टी हमने खोदी, कारिन्दा ने कुछ नहीं कहा। दूसरा खोदे तो नज़र देनी पड़े। अपने मतलब के लिए सलामी करने जाता हूँ, पाँव में सनीचर नहीं है और न सलामी करने में कोई बड़ा सुख मिलता है। घंटों खड़े रहो, तब जाके मालिक को ख़बर होती है। कभी बाहर निकलते हैं, कभी कहला देते हैं कि फ़ुरसत नहीं है।गोबर ने कटाक्ष किया -- बड़े आदमियों की हाँ-में-हाँ मिलाने में कुछ-न-कुछ आनन्द तो मिलता ही है। नहीं लोग मेम्बरी के लिए क्यों खड़े हों?[2]

'जब सिर पर पड़ेगी तब मालूम होगा बेटा, अभी जो चाहे कह लो। पहले मैं भी यही सब बातें सोचा करता था; पर अब मालूम हुआ कि हमारी गरदन दूसरों के पैरों के नीचे दबी हुई है अकड़ कर निबाह नहीं हो सकता।'पिता पर अपना क्तोध उतारकर गोबर कुछ शान्त हो गया और चुपचाप चलने लगा। सोना ने देखा, रूपा बाप की गोद में चढ़ी बैठी है तो ईर्ष्या हुई। उसे डाँटकर बोली -- अब गोद से

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

उतरकर पाँव-पाँव क्यों नहीं चलती, क्या पाँव टूट गये हैं?रूपा ने बाप की गरदन में हाथ डालकर ढिठाई से कहा -- न उतरेंगे जाओ। काका, बहन हमको रोज़ चिढ़ाती है कि तू रूपा है, मैं सोना हूँ। मेरा नाम कुछ और रख दो।होरी ने सोना को बनावटी रोष से देखकर कहा -- तू इसे क्यों चिढ़ाती है सोनिया? सोना तो देखने को है। निबाह तो रूपा से होता है। रूपा न हो, तो रुपए कहाँ से बनें, बता।सोना ने अपने पक्ष का समर्थन किया -- सोना न हो मोहन कैसे बने, नथुनियाँ कहाँ से आयें, कंठा कैसे बने?गोबर भी इस विनोदमय विवाद में शरीक हो गया। रूपा से बोला -- तू कह दे कि सोना तो सूखी पत्ती की तरह पीला है, रूपा तो उजला होता है जैसे सूरज।सोना बोली -- शादी-ब्याह में पीली साड़ी पहनी जाती है, उजली साड़ी कोई नहीं पहनता।रूपा इस दलील से परास्त हो गयी। गोबर और होरी की कोई दलील इसके सामने न ठहर सकी। उसने क्षुब्ध आँखों से होरी को देखा।होरी को एक नयी युक्ति सूझ गयी। बोला -- सोना बड़े आदमियों के लिए है। हम ग़रीबों के लिए तो रूपा ही है। जैसे जौ को राजा कहते हैं, गेहूँ को चमार; इसलिए न कि गेहूँ बड़े आदमी खाते हैं, जौ हम लोग खाते हैं।सोना के पास इस सबल युक्ति का कोई जवाब न था। परास्त होकर बोली -- तुम सब जने एक ओर हो गये, नहीं रुपिया को रुलाकर छोड़ती।[1]

रूपा ने उँगली मटकाकर कहा -- ए राम, सोना चमार -- ए राम, सोना चमार।इस विजय का उसे इतना आनन्द हुआ कि बाप की गोद में रह न सकी। ज़मीन पर कूद पड़ी और उछल-उछलकर यही रट लगाने लगी -- रूपा राजा, सोना चमार -- रूपा राजा, सोना चमार!ये लोग घर पहुँचे तो धनिया द्वार पर खड़ी इनकी बाट जोह रही थी। रुष्ट होकर बोली -- आज इतनी देर क्यों की गोबर? काम के पीछे कोई परान थोड़े ही दे देता है।फिर पति से गर्म होकर कहा -- तुम भी वहाँ से कमाई करके लौटे तो खेत में पहुँच गये। खेत कहीं भागा जाता था!द्वार पर कुआँ था। होरी और गोबर ने एक-एक कलसा पानी सिर पर उँड़ेला, रूपा को नहलाया और भोजन करने गये। जौ की रोटियाँ थीं; पर गेहूँ-जैसी सुफ़ेद और चिकनी। अरहर की दाल थी जिसमें कच्चे आम पड़े हुए थे। रूपा बाप की थाली में खाने बैठी। सोना ने उसे ईष्यार्-भरी आँखों से देखा, मानो कह रही थी, वाह रे दुलार!धनिया ने पूछा -- मालिक से क्या बात-चीत हुई?होरी ने लोटा-भर पानी चढ़ाते हुए कहा -- यही तहसील-वसूल की बात थी और क्या। हम लोग समझते हैं, बड़े आदमी बहुत सुखी होंगे; लेकिन सच पूछो, तो वह हमसे भी ज़्यादा दुःखी हैं। हमें अपने पेट ही की चिन्ता है, उन्हें हज़ारों चिन्ताएँ घेरे रहती हैं।राय साहब ने और क्या-क्या कहा था, वह कुछ होरी को याद न था। उस सारे कथन का ख़ुलासा-मात्र उसके स्मरण में चिपका हुआ रह गया था।गोबर ने व्यंग्य किया -- तो फिर अपना इलाक़ा हमें क्यों नहीं दे देते! हम अपने खेत, बैल, हल, कुदाल सब उन्हें देने को तैयार हैं। करेंगे बदला? यह सब धूर्तता है, निरी मोटमरदी। जिसे दुःख होता है, वह दरजनों मोटरें नहीं रखता, महलों में नहीं रहता, हलवा-पूरी नहीं खाता और न नाच-रंग में लिप्त रहता है। मज़े से राज का सुख भोग रहे हैं, उस पर दुखी हैं!होरी ने झुँझलाकर कहा -- अब तुमसे बहस कौन करे भाई! जैजात किसी से छोड़ी जाती है कि वही छोड़ देंगे। हमीं को खेती से क्या मिलता है? एक आने नफ़री की मजूरी भी तो नहीं पड़ती। जो दस रुपए महीने का भी नौकर है, वह भी हमसे अच्छा खाता-पहनता है, लेकिन खेतों को छोड़ा तो नहीं जाता। खेती छोड़ दें, तो और करें क्या? नौकरी कहीं मिलती है? फिर मरजाद भी तो पालना ही पड़ता है। खेती में जो मरजाद है वह नौकरी में तो नहीं है। इसी तरह ज़मींदारों का हाल भी समझ लो! उनकी जान को भी तो सैकड़ों रोग लगे हुए हैं, हाकिमों को रसद पहुँचाओ, उनकी सलामी करो, अमलों को ख़ुश करो। तारीख़ पर मालगुज़ारी न चुका दें, तो हवालात हो जाय , कुड़की आ जाय। हमें तो कोई हवालात नहीं ले जाता। दो-चार गलियाँ-घुड़कियाँ ही तो मिलकर रह जाती हैं।गोबर ने प्रतिवाद किया -- यह सब कहने की बातें हैं। हम लोग दाने-दाने को मुहताज हैं, देह पर साबित कपड़े नहीं हैं, चोटी का पसीना एड़ी तक आता है, तब भी गुज़र नहीं होता। उन्हें क्या, मज़े से गद्दी-मसनद लगाये बैठे हैं, सैकड़ों नौकर-चाकर हैं, हज़ारों आदमियों पर हुकूमत है। रुपए न जमा होते हों; पर सुख तो सभी तरह का भोगते हैं। धन लेकर आदमी और क्या करता है?'तुम्हारी समझ में हम और वह बराबर हैं?"भगवान् ने तो सबको बराबर ही बनाया है।'[2]

'यह बात नहीं है बेटा, छोटे-बड़े भजवान के घर से बनकर आते हैं। सम्पत्ति बड़ी तपस्या से मिलती है। उन्होंने पूर्वजन्म में जैसे कर्म किये हैं, उनका आनन्द भोग रहे हैं। हमने कुछ नहीं संचा, तो भोगें क्या?'यह सब मन को समझाने की बातें हैं। भगवान् सबको बराबर बनाते हैं। यहाँ जिसके हाथ में लाठी है, वह ग़रीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है।"यह तुम्हारा भरम है। मालिक आज भी चार घंटे रोज़ भगवान् का भजन करते हैं।"किसके बल पर यह भजन-भाव और दान-धर्म होता है?"अपने बल पर।"नहीं, किसानों के बल पर और मज़दूरों के बल पर। यह पाप का धन पचे कैसे? इसीलिए दान-धर्म करना पड़ता है, भगवान् का भजन भी इसीलिए होता है, भूखे-नंगे रहकर भगवान् का भजन करें, तो हम भी देखें। हमें कोई दोनों जून खाने को दे तो हम आठों पहर भगवान् का जाप ही करते रहें। एक दिन खेत में ऊख गोड़ना पड़े तो सारी भिक्त भूल जाय।'होरी ने हार कर कहा -- अब तुम्हारे मुँह कौन लगे भाई, तुम तो भगवान् की लीला में भी टाँग अड़ाते हो।[3]

तीसरे पहर गोबर कुदाल लेकर चला, तो होरी ने कहा -- ज़रा ठहर जाओ बेटा, हम भी चलते हैं। तब तक थोड़ा-सा भूसा निकालकर रख दो। मैंने भोला को देने को कहा है। बेचारा आजकल बहुत तंग है।गोबर ने अवज्ञा-भरी आँखों से देखकर कहा -- हमारे पास बेचने को भूसा नहीं है।'बेचता नहीं हूँ भाई, यों ही दे रहा हूँ। वह संकट में है, उसकी मदद तो करनी ही पड़ेगी।"हमें तो उन्होंने कभी एक गाय नहीं दे दी।"दे तो रहा था; पर हमने ली ही नहीं।'

धनिया मटक्कर बोली -- गाय नहीं वह दे रहा था। इन्हें गाय दे देगा! आँख में अंजन लगाने को कभी चिल्लू-भर दूध तो भेजा नहीं, गाय देगा!होरी ने क़सम खायी -- नहीं, जवानी क़सम, अपनी पछाई गाय दे रहे थे। हाथ तंग है, भूसा-चारा नहीं रख सके। अब एक गाय बेचकर भूसा लेना चाहते हैं। मैंने सोचा, संकट में पड़े आदमी की गाय क्या लूँगा। थोड़ा-सा भूसा दिये देता हूँ, कुछ रुपए हाथ आ जायँगे तो गाय ले लूँगा। थोड़ा-थोड़ा करके चुका दूँगा। अस्सी रुपए की है; मगर ऐसी कि आदमी देखता रहे।गोबर ने आड़े हाथों लिया -- तुम्हारा यही धमार्त्मापन तो तुम्हारी दुर्गत कर रहा है। साफ़-साफ़ तो बात है। अस्सी रुपए की गाय है, हमसे बीस रुपए का भूसा ले लें ओर गाय हमें दे दें। साठ रुपए रह जायँगे, वह हम धीरे-धीरे दे देंगे।होरी रहस्यमय ढंग से मुस्कुराया -- मैंने ऐसी चाल सोची है कि गाय सेंत-मेंत में हाथ आ जाय। कहीं भोला की सगाई ठीक करनी है, बस। दो-चार मन भूसा तो ख़ाली अपना रंग जमाने को देता हूँ।गोबर ने तिरस्कार किया -- तो तुम अब सब की सगाई ठीक करते फिरोगे?धनिया ने तीखी आँखों से देखा -- अब यही एक उद्यम तो रह गया है। नहीं देना है हमें भूसा किसी को। यहाँ भोली-भाली किसी का करज़ नहीं खाया है।होरी ने अपनी सफ़ाई दी -- अगर मेरे जतन से किसी का घर बस जाय, तो इसमें कौन-सी बुराई है?गोबर ने चिलम उठाई और आग लेने चला गया। उसे यह झमेला बिल्कुल नहीं भाता था।[4]

धनिया ने सिर हिला कर कहा -- जो उनका घर बसायेगा, वह अस्सी रुपए की गाय लेकर चुप न होगा। एक थैली गिनवायेगा।होरी ने पुचारा दिया -- यह मैं जानता हूँ; लेकिन उनकी भलमनसी को भी तो देखो। मुझसे जब मिलता है, तेरा बखान ही करता है -- ऐसी लक्ष्मी है, ऐसी सलीके-दार है।धनिया के मुख पर स्निग्धता झलक पड़ी। मनभाय मुड़िया हिलाये वाले भाव से बोली -- मैं उनके बखान की भूखी नहीं हूँ, अपना बखान धरे रहें।होरी ने स्नेह-भरी मुस्कान के साथ कहा -- मैंने तो कह दिया, भैया, वह नाक पर मक्खी भी नहीं बैठने देती, गालियों से बात करती है; लेकिन वह यही कहे जाय कि वह औरत नहीं लक्ष्मी है। बात यह है कि उसकी घरवाली ज़बान की बड़ी तेज़ थी। बेचारा उसके डर के मारे भागा-भागा फिरता था। कहता था, जिस दिन तुम्हारी घरवाली का मुँह सबेरे देख लेता हूँ, उस दिन कुछ-न-कुछ ज़रूर हाथ लगता है। मैंने कहा -- तुम्हारे हाथ लगता होगा, यहाँ तो रोज़ देखते हैं, कभी पैसे से भेंट नहीं होती।'तुम्हारे भाग ही खोटे हैं, तो मैं क्या करूँ।"लगा अपनी घरवाली की बुराई करने -- भिखारी को भीख तक नहीं देती थी, झाड़ू लेकर मारने दौड़ती थी, लालचिन ऐसी थी कि नमक तक दूसरों के घर से माँग लाती थी!"मरने पर किसी की क्या बुराई करूँ। मुझे देखकर जल उठती थी।"भोला बड़ा ग़मख़ोर था कि उसके साथ निबाह कर दिया। दूसरा होता तो ज़हर खाके मर जाता। मुझसे दस साल बड़े होंगे भोला; पर राम-राम पहले ही करते हैं।"तो क्या कहते थे कि जिस दिन तुम्हारी घरवाली का मुँह देख लेता हूँ, तो क्या होता है?"उस दिन भगवान् कहीं-न-कहीं से कुछ भेज देते हैं।"बहुएँ भी तो वैसी ही चटोरिन आयी हैं। अबकी सबों ने दो रुपए के ख़रबूज़े उधार खा डाले। उधार मिल जाय, फिर उन्हें चिन्ता नहीं होती कि देना पड़ेगा या नहीं।"और भोला रोते काहे को हैं?गोबर आकर बोला -- भोला दादा आ पहुँचे। मन दो मन भूसा हैरु वह उन्हें दे दो, फिर उनकी सगाई ढूँढ़ने निकलो।धनिया ने समझाया -- आदमी द्वार पर बैठा है उसके लिए खाट-वाट तो डाल नहीं दी, ऊपर से लगे भुनभुनाने। कुछ तो भलमंसी सीखो। कलसा ले जाओ, पानी भरकर रख दो, हाथ-मुँह धोयें, कुछ रस-पानी पिला दो। मुसीबत में ही आदमी दूसरों के सामने हाथ फैलाता है।होरी बोला -- रस-वस का काम नहीं है, कौन कोई पाहुने हैं।धनिया बिगड़ी -- पाहुने और कैसे होते हैं! रोज़-रोज़ तो तुम्हारे द्वार पर नहीं आते? इतनी दूर से धूप-घाम में आये हैं, प्यास लगी ही होगी। रुपिया, देख डब्बे में तमाखू है कि नहीं, गोबर के मारे काहे को बची होगी। दौड़कर एक पैसे का तमाखू सहुआइन की दुकान से ले ले।भोला की आज जितनी ख़ातिर हुई, और कभी न हुई होगी। गोबर ने खाट डाल दी, सोना रस घोल लायी, रूपा तमाखू भर लायी। धनिया द्वार पर किवाड़ की आड़ में खड़ी अपने कानों से अपना बखान सुनने के लिए अधीर हो रही थी।भोला ने चिलम हाथ में लेकर कहा -- अच्छी घरनी घर में आ जाय, तो समझ लो लक्ष्मी आ गयी। वही जानती है छोटे-बड़े का आदर-सत्कार कैसे करना चाहिए।धनिया के हृदय में उल्लास का कम्पन हो रहा था। चिन्ता और निराशा और अभाव से आहत आत्मा इन शब्दों में एक कोमल शीतल स्पर्श का अनुभव कर रही थी।होरी जब भोला का खाँचा उठाकर भूसा लाने अन्दर चला, तो धनिया भी पीछे-पीछे चली। होरी ने कहा -- जाने कहाँ से इतना बड़ा खाँचा मिल गया। किसी भड़भूजे से माँग लिया होगा। मन-भर से कम में न भरेगा। दो खाँचे भी दिये, तो दो मन निकल जायँगे।धनिया फूली हुई थी। मलामत की आँखों से देखती हुई बोली -- या तो किसी को नेवता न दो, और दो तो भरपेट खिलाओ। तुम्हारे पास फूल-पत्र लेने थोड़े ही आये हैं कि चँगेरी लेकर चलते। देते ही हो, तो तीन खाँचे दे दो। भला आदमी लड़कों को क्यों नहीं लाया। अकेले कहाँ तक ढोयेगा। जान निकल जायगी।'तीन खाँचे तो मेरे दिये न दिये जायँगे !"तब क्या एक खाँचा देकर टालोगे? गोबर से कह दो, अपना खाँचा भरकर उनके साथ चला जाय।'[5]

'गोबर ऊख गोड़ने जा रहा है।'

'एक दिन न गोड़ने से ऊख न सूख जायगी।'

'यह तो उनका काम था कि किसी को अपने साथ ले लेते। भगवान् के दिये दो-दो बेटे हैं।'

'न होंगे घर पर। दूध लेकर बाज़ार गये होंगे।'

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

'यह तो अच्छी दिल्लगी है कि अपना माल भी दो और उसे घर तक पहुँचा भी दो। लाद दे, लदा दे, लादनेवाला साथ कर दे।'

'अच्छा भाई, कोई मत जाय। मैं पहुँचा दूँगी। बड़ों की सेवा करने में लाज नहीं है।'

'और तीन खाँचे उन्हें दे दूँ, तो अपने बैल क्या खायेंगे?'

'यह सब तो नेवता देने के पहले ही सोच लेना था। न हो, तुम और गोबर दोनों जने चले जाओ।'

'मुरौवत मुरौवत की तरह की जाती है, अपना घर उठाकर नहीं दे दिया जाता!'

'अभी ज़मींदार का प्यादा आ जाय, तो अपने सिर पर भूसा लादकर पहुँचाओगे तुम, तुम्हारा लड़का, लड़की सब। और वहाँ साइत मन-दो-मन लकड़ी भी फाड़नी पड़े।'

'ज़मींदार की बात और है।'

'हाँ, वह डंडे के ज़ोर से काम लेता है न।'

'उसके खेत नहीं जोतते?'

'खेत जोतते हैं, तो लगान नहीं देते?'

'अच्छा भाई, जान न खा, हम दोनों चले जायँगे। कहाँ-से-कहाँ मैंने इन्हें भूसा देने को कह दिया। या तो चलेगी नहीं, या चलेगी तो दौड़ने लगेगी।'तीनों खाँचे भूसे से भर दिये गये। गोबर कुढ़ रहा था। उसे अपने बाप के व्यवहारों में ज़रा भी विश्वास न था। वह समझता था, यह जहाँ जाते हैं, वहीं कुछ-न-कुछ घर से खो आते हैं। धनिया प्रसन्न थी। रहा होरी, वह धर्म और स्वार्थ के बीच में डूब-उतरा रहा था।होरी और गोबर मिलकर एक खाँचा बाहर लाये। भोला ने तुरन्त अपने अँगोछे का बीड़ा बनाकर सिर पर रखते हुए कहा -- मैं इसे रखकर अभी भागा आता हूँ। एक खाँचा और लूँगा।होरी बोला -- एक नहीं, अभी दो और भरे धरे हैं। और तुम्हें आना नहीं पड़ेगा। मैं और गोबर एक-एक खाँचा लेकर तुम्हारे साथ ही चलते हैं।भोला स्तम्भित हो गया। होरी उसे अपना भाई बल्कि उससे भी निकट जान पड़ा। उसे अपने भीतर एक ऐसी तृप्ति का अनुभव हुआ, जिसने मानो उसके सम्पूर्ण जीवन को हरा कर दिया।तीनों भूसा लेकर चले, तो राह में बातें होने लगीं।भोला ने पूछा -- दशहरा आ रहा है, मालिकों के द्वार पर तो बड़ी धूमधाम होगी?'हाँ, तम्बू सामियाना गड़ गया है। अब की लीला में मैं भी काम करूँगा। राय साहब ने कहा है, तुम्हें राजा जनक का माली बनना पड़ेगा।'[6]

'मालिक तुमसे बहुत ख़ुश हैं।'

'उनकी दया है।'

एक क्षण के बाद भोला ने फिर पूछा -- सगुन करने के रुपए का कुछ जुगाड़ कर लिया है? माली बन जाने से तो गला न छूटेगा।होरी ने मुँह का पसीना पोंछकर कहा -- उसी की चिन्ता तो मारे डालती है दादा -- अनाज तो सब-का-सब खलिहान में ही तुल गया। ज़मींदार ने अपना लिया, महाजन ने अपना लिया। मेरे लिए पाँच सेर अनाज बच रहा। यह भूसा तो मैंने रातोंरात ढोकर छिपा दिया था, नहीं तिनका भी न बचता। ज़मींदार तो एक ही हैं; मगर महाजन तीनतीन हैं, सहुआइन अलग, मँगरू अलग और दातादीन पण्डित अलग। किसी का ब्याज भी पूरा न चुका। ज़मींदार के भी आधे रुपए बाक़ी पड़ गये। सहुआइन से फिर रुपए उधार लिये तो काम चला। सब तरह किफ़ायत कर के देख लिया भैया, कुछ नहीं होता। हमारा जनम इसी लिए हुआ है कि अपना रक्त बहायें और बड़ों का घर भरें। मूलका दुगना सूद भर चुका; पर मूल ज्यों-का-त्यों सिर पर सवार है। लोग कहते हैं, सर्दी-गर्मी में, तीरथ-बरत में हाथ बाँधकर ख़रच करो। मुदा रास्ता कोई नहीं दिखाता। राय साहब ने बेटे के ब्याह में बीस हज़ार लुटा दिये। उनसे कोई कुछ नहीं कहता। मँगरू ने अपने बाप के िक्तया-करम में पाँच हज़ार लगाये। उनसे कोई कुछ नहीं पूछता। वैसा ही मरजाद तो सबका है।भोला ने करुण भाव से कहा -- बड़े आदमियों की बराबरी तुम कैसे कर सकते हो भाई?'आदमी तो हम भी हैं।[7]

'कौन कहता है कि हम तुम आदमी हैं। हममें आदमियत कहाँ? आदमी वह हैं, जिनके पास धन है, अख़्तियार है, इलम है, हम लोग तो बैल हैं और जुतने के लिए पैदा हुए हैं। उसपर एक दूसरे को देख नहीं सकता। एका का नाम नहीं। एक किसान दूसरे के खेत पर न चढ़े तो कोई जाफ़ा कैसे करे, प्रेम तो संसार से उठ गया।'बूढ़ों के लिए अतीत के सुखों और वर्तमान के दुःखों और भविष्य के सर्वनाश से ज़्यादा मनोरंजक और कोई प्रसंग नहीं होता। दोनों मित्र अपने-अपने दुखड़े रोते रहे। भोला ने अपने बेटों के करतूत सुनाये, होरी ने अपने भाइयों का रोना रोया और तब एक कुएँ पर बोझ रखकर पानी पीने के लिए बैठ गये। गोबर ने बनिये से लोटा

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

माँगा और पानी खींचने लगा।भोला ने सहृदयता से पूछा -- अलगौझे के समय तो तुम्हें बड़ा रंज हुआ होगा। भाइयों को तो तुमने बेटों की तरह पाला था।[6]

होरी आद्रर् कंठ से बोला -- कुछ न पूछो दादा, यही जी चाहता था कि कहीं जाके डूब मरूँ। मेरे जीते जी सब कुछ हो गया। जिनके पीछे अपनी जवानी धूल में मिला दी, वही मेरे मुद्दई हो गये और झगड़े की जड़ क्या थी? यही कि मेरी घरवाली हार में काम करने क्यों नहीं जाती। पूछो, घर देखनेवाला भी कोई चाहिए कि नहीं। लेना-देना, धरना उठाना, सँभालना-सहेजना, यह कौन करे। फिर वह घर बैठी तो नहीं रहती थी, झाड़ू-बुहारू, रसोई, चौका-बरतन, लड़कों की देख-भाल यह कोई थोड़ा काम है। सोभा की औरत घर सँभाल लेती कि हीरा की औरत में यह सलीका था? जब से अलगौझा हुआ है, दोनों घरों में एक जून रोटी पकती है। नहीं सब को दिन में चार बार भूख लगती थी। अब खायँ चार दफ़े, तो देखूँ। इस मालिकपन में गोबर की माँ की जो दुर्गती हुई है, वह मैं ही जानता हूँ। बेचारी अपनी देवरानियों के फटे-पुराने कपड़े पहनकर दिन काटती थी, ख़ुद भूखी सो रही होगी; लेकिन बहुओं के लिए जलपान तक का ध्यान रखती थी। अपनी देह पर गहने के नाम कच्चा धागा भी न था, देवरानियों के लिए दो-दो चार-चार गहने बनवा दिये। सोने के न सही चाँदी के तो हैं। जलन यही थी कि यह मालिक क्यों है। बहुत अच्छा हुआ कि अलग हो गये। मेरे सिर से बला टली।भोला ने एक लोटा पानी चढ़ाकर कहा -- यही हाल घर-घर है भैया! भाइयों की बात ही क्या, यहाँ तो लड़कों से भी नहीं पटती और पटती इसलिए नहीं कि मैं किसी की कुचाल देखकर मुँह नहीं बन्द कर सकता। तुम जुआ खेलोगे, चरस पीओगे, गाँजे के दम लगाओगे, मगर आये किसके घर से? ख़रचा करना चाहते हो तो कमाओ; मगर कमाई तो किसी से न होगी। ख़रच दिल खोलकर करेंगे। जेठा कामता सौदा लेकर बाज़ार जायगा, तो आधे पैसे ग़ायब। पूछो तो कोई जवाब नहीं। छोटा जंगी है, वह संगत के पीछे मतवाला रहता है। साँझ हुई और ढोल-मजीरा लेकर बैठ गये। संगत को मैं बुरा नहीं कहता। गाना-बजाना ऐब नहीं; लेकिन यह सब काम फ़ुरसत के हैं। यह नहीं कि घर का तो कोई काम न करो, आठों पहर उसी धुन में पड़े रहो। जाती है मेरे सिर; सानी-पानी मैं करूँ, गाय-भैंस मैं दुहूँ, दूध लेकर बाज़ार मैं जाऊँ। यह गृहस्थी जी का जंजाल है, सोने की हँसिया, जिसे न उगलते बनता है, न निगलते। लड़की है, झुनिया, वह भी नसीब की खोटी। तुम तो उसकी सगाई में आये थे। कितना अच्छा घर-बर था। उसका आदमी बम्बई में दूध की दूकान करता था। उन दिनों वहाँ हिन्दू-मुसलमानों में दंगा हुआ, तो किसी ने उसके पेट में छूरा भोंक दिया। घर ही चौपट हो गया। वहाँ अब उसका निबाह नहीं। जाकर लिवा लाया कि दूसरी सगाई कर दूँगा; मगर वह राज़ी ही नहीं होती। और दोनों भावजें हैं कि रात-दिन उसे जलाती रहती हैं। घर में महाभारत मचा रहता है। विपत की मारी यहाँ आई, यहाँ भी चैन नहीं।इन्हीं दुखड़ों में रास्ता कट गया। भोला का पुरवा था तो छोटा; मगर बहुत गुलज़ार। अधिकतर अहीर ही बसते थे। और किसानों के देखते इनकी दशा बहुत बुरी न थी। भोला गाँव का मुखिया था। द्वार पर बड़ी-सी चरनी थी जिस पर दस-बारह गायें-भैंसें खड़ी सानी खा रही थीं। ओसारे में एक बड़ा-सा तख़्त पड़ा था जो शायद दस आदमियों से भी न उठता। किसी खूँटी पर ढोलक लटक रही थी किसी पर मजीरा। एक ताख पर कोई पुस्तक बस्ते में बँधी रखी हुई थी, जो शायद रामायण हो। दोनों बहुएँ सामने बैठी गोबर पाथ रही थीं और झुनिया चौखट पर खड़ी थी। उसकी आँखें लाल थीं और नाक के सिरे पर भी सुख़ीर् थी। मालूम होता था, अभी रोकर उठी है। उसके मांसल, स्वस्थ, सुगठित अंगों में मानो यौवन लहरें मार रहा था। मुँह बड़ा और गोल था, कपोल फूले हुए, आँखें छोटी और भीतर धँसी हुई, माथा पतला; पर वक्ष का उभार और गात का वही गुदगुदापन आँखों को खींचता था। उस पर छपी हुई गुलाबी साड़ी उसे और भी शोभा प्रदान कर रही थी।भोला को देखते ही उसने लपककर उनके सिर से खाँचा उतरवाया। भोला ने गोबर और होरी के खाँचे उतरवाये और झुनिया से बोले -- पहले एक चिलम भर ला, फिर थोड़ा-सा रस बना ले। पानी न हो तो गगरा ला, मैं खींच दूँ। होरी महतो को पहचानती है न?फिर होरी से बोला -- घरनी के बिना घर नहीं रहता भैया। पुरानी कहावत है -- नाटन खेती बहुरियन घर। नाटे बैल क्या खेती करेंगे और बहुएँ क्या घर सँभालेंगी। जब से इसकी माँ मरी है, जैसे घर की बरकत ही उठ गयी। बहुएँ आटा पाथ लेती हैं। पर गृहस्थी चलाना क्या जानें। हाँ, मुँह चलाना ख़ूब जानती हैं। लौंडे कहीं फड़ पर जमे होंगे। सब-के-सब आलसी हैं, कामचोर। जब तक जीता हूँ, इनके पीछे मरता हूँ। मर जाऊँगा, तो आप सिर पर हाथ धरकर रोयेंगे। लड़की भी वैसी ही है। छोटा-सा अढ़ौना भी करेगी, तो भुन-भुनाकर। मैं तो सह लेता हूँ, ख़सम थोड़े ही सहेगा।झुनिया एक हाथ में भरी हुई चिलम, दूसरे में लोटे का रस लिये बड़ी फुतीर् से आ पहुँची। फिर रस्सी और कलसा लेकर पानी भरने चली। गोबर ने उसके हाथ से कलसा लेने के लिए हाथ बढ़ाकर झेंपते हुए कहा -- तुम रहने दो, मैं भरे लाता हूँ।झुनिया ने कलसा न दिया। कुएँ के जगत पर जाकर मुस्कराती हुई बोली -- तुम हमारे मेहमान हो। कहोगे एक लोटा पानी भी किसी ने न दिया।'मेहमान काहे से हो गया। तुम्हारा पड़ोसी ही तो हूँ।''पड़ोसी साल-भर में एक बार भी सूरत न दिखाये, तो मेहमान ही है।''रोज़-रोज़ आने से मरजाद भी तो नहीं रहती।'झुनिया हँसकर तिरछी नज़रों से देखती हुई बोली -- वही मरजाद तो दे रही हूँ। महीने में एक बेर आओगे, ठंडा पानी दूँगी। पन्द्रहवें दिन आओगे, चिलम पाओगे। सातवें दिन आओगे, ख़ाली बैठने को माची दूँगी। रोज़-रोज़ आओगे, कुछ न पाओगे।'दरसन तो दोगी?'दरसन के लिए पूजा करनी पड़ेगी।'यह कहते-कहते जैसे उसे कोई भूली हुई बात याद आ गयी। उसका मुँह उदास हो गया। वह विधवा है। उसके नारीत्व के द्वार पर पहले उसका पति रक्षक बना बैठा रहता था। वह निश्चिन्त थी। अब उस द्वार पर कोई रक्षक न था, इसलिए वह उस द्वार को सदैव बन्द रखती है। कभी-कभी घर के सूनेपन से उकताकर वह द्वार खोलती है; पर किसी को आते देखकर भयभीत होकर दोनों पट भेड़ लेती है।गोबर ने कलसा भरकर निकाला। सबों ने रस पिया और एक चिलम तमाखू और पीकर लौटे। भोला ने कहा -- कल तुम आकर गाय ले जाना गोबर, इस बखत तो सानी

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

खा रही है।गोबर की आँखें उसी गाय पर लगी हुई थी और मन-ही-मन वह मुग्ध हुआ जाता था। गाय इतनी सुन्दर और सुडौल है, इसकी उसने कल्पना भी न की थी।[7]

होरी ने लोभ को रोककर कहा -- मँगवा लूँगा, जल्दी क्या है?

'तुम्हें जल्दी न हो, हमें तो जल्दी है। उसे द्वार पर देखकर तुम्हें वह बात याद रहेगी।'

'उसकी मुझे बड़ी फ़िकर है दादा!'

'तो कल गोबर को भेज देना।'

दोनों ने अपने-अपने खाँचे सिर पर रखे और आगे बढ़े। दोनों इतने प्रसन्न थे मानो ब्याह करके लौटे हों। होरी को तो अपनी चिर संचित अभिलाषा के पूरे होने का हर्ष था, और बिना पैसे के। गोबर को इससे भी बहुमूल्य वस्तु मिल गयी थी। उसके मन में अभिलाषा जाग उठी थी।अवसर पाकर उसने पीछे की तरफ़ देखा। झुनिया द्वार पर खड़ी थी, मन आशा की भाँति अधीर, चंचल।

4.होरी को रात भर नींद नहीं आयी। नीम के पेड़-तले अपनी बाँस की खाट पर पड़ा बार-बार तारों की ओर देखता था। गाय के लिए एक नाँद गाड़नी है। बैलों से अलग उसकी नाँद रहे तो अच्छा। अभी तो रात को बाहर ही रहेगी; लेकिन चौमासे में उसके लिए कोई दूसरी जगह ठीक करनी होगी। बाहर लोग नज़र लगा देते हैं। कभी-कभी तो ऐसा टोना-टोटका कर देते हैं कि गाय का दूध ही सूख जाता है। थन में हाथ ही नहीं लगाने देती। लात मारती है। नहीं, बाहर बाँधना ठीक नहीं। और बाहर नाँद भी कौन गाड़ने देगा। कारिन्दा साहब नज़र के लिए मुँह फुलायेंगे। छोटी छोटी बात के लिए राय साहब के पास फ़रियाद ले जाना भी उचित नहीं। और कारिन्दे के सामने मेरी सुनता कौन है। उनसे कुछ कहूँ, तो कारिन्दा दुश्मन हो जाय। जल में रहकर मगर से बैर करना लड़कपन है। भीतर ही बाँधूँगा। आँगन है तो छोटा-सा; लेकिन एक मड़ैया डाल देने से काम चल जायगा। अभी पहला ही ब्यान है। पाँच सेर से कम क्या दूध देगी। सेर-भर तो गोबर ही को चाहिए। रुपिया दूध देखकर कैसी ललचाती रहती है। अब पिये जितना चाहे। कभी-कभी दो-चार सेर मालिकों को दे आया करूँगा। कारिन्दा साहब की पूजा भी करनी ही होगी। और भोला के रुपए भी दे देना चाहिये। सगाई के ढकोसले में उसे क्यों डालूँ। जो आदमी अपने ऊपर इतना विश्वास करे, उससे दग़ा करना नीचता है। अस्सी रुपए की गाय मेरे विश्वास पर दे दी। नहीं यहाँ तो कोई एक पैसे को नहीं पतियाता। सन में क्या कुछ न मिलेगा? अगर पच्चीस रुपए भी दे दूँ, तो भोला को ढाढ़स हो जाय। धनिया से नाहक़ बता दिया। चुपके से गाय लेकर बाँध देता तो चकरा जाती। लगती पूछने, किसकी गाय है? कहाँ से लाये हो?। ख़ूब दिक करके तब बताता; लेकिन जब पेट में बात पचे भी। कभी दो-चार पैसे ऊपर से आ जाते हैं; उनको भी तो नहीं छिपा सकता। और यह अच्छा भी है। उसे घर की चिन्ता रहती है; अगर उसे मालूम हो जाय कि इनके पास भी पैसे रहते हैं, तो फिर नख़रे बघारने लगे। गोबर ज़रा आलसी है, नहीं मैं गऊ की ऐसी सेवा करता कि जैसी चाहिए। आलसी-वालसी कुछ नहीं है। इस उमिर में कौन आलसी नहीं होता। मैं भी दादा के सामने मटरगस्ती ही किया करता था। बेचारे पहर रात से कुट्टी काटने लगते। कभी द्वार पर झाड़ू लगाते, कभी खेत में खाद फेंकते। मैं पड़ा सोता रहता था। कभी जगा देते, तो मैं बिगड़ जाता और घर छोड़कर भाग जाने की धमकी देता था। लड़के जब अपने माँ-बाप के सामने भी ज़िन्दगी का थोड़ा-सा सुख न भोगेंगे, तो फिर जब अपने सिर पड़ गयी तो क्या भोगेंगे? दादा के मरते ही क्या मैंने घर नहीं सँभाल लिया? सारा गाँव यही कहता था कि होरी घर बरबाद कर देगा; लेकिन सिर पर बोझ पड़ते ही मैंने ऐसा चोला बदला कि लोग देखते रह गये। सोभा और हीरा अलग ही हो गये, नहीं आज इस घर की और ही बात होती। तीन हल एक साथ चलते। अब तीनों अलग-अलग चलते हैं। बस, समय का फेर है। धनिया का क्या दोष था। बेचारी जब से घर में आयी, कभी तो आराम से न बैठी। डोली से उतरते ही सारा काम सिर पर उठा लिया। अम्मा को पान की तरह फेरती रहती थी। जिसने घर के पीछे अपने को मिटा दिया, देवरानियों से काम करने को कहती थी, तो क्या बुरा करती थी। आख़िर उसे भी तो कुछ आराम मिलना चाहिये। लेकिन भाग्य में आराम लिखा होता तब तो मिलता। तब देवरों के लिए मरती थी, अब अपने बच्चों के लिए मरती है। वह इतनी सीधी, ग़मख़ोर, निर्छल न होती, तो आज सोभा और हीरा जो मूँछों पर ताव देते फिरते हैं, कहीं भीख माँगते होते। आदमी कितना स्वार्थी हो जाता है। जिसके लिए लड़ो वही जान का दुश्मन हो जाता है। होरी ने फिर पूर्व की ओर देखा। साइत भिनसार हो रहा है। गोबर काहे को जगने लगा। नहीं, कहके तो यही सोया था कि मैं अँधेरे ही चला जाऊँगा। जाकर नाँद तो गाड़ दूँ, लेकिन नहीं, जब तक गाय द्वार पर न आ जाय, नाँद गाड़ना ठीक नहीं। कहीं भोला बदल गये या और किसी कारन से गाय न दी, तो सारा गाँव तालियाँ पीटने लगेगा, चले थे गाय लेने। पट्ठे ने इतनी फुर्ती से नाँद गाड़ दी, मानो इसी की कसर थी। भोला है तो अपने घर का मालिक; लेकिन जब लड़के सयाने हो गये, तो बाप की कौन चलती है। कामता और जंगी अकड़ जायँ, तो क्या भोला अपने मन से गाय मुझे दे देंगे, कभी नहीं। सहसा गोबर चौंककर उठ बैठा और आँखें मलता हुआ बोला -- अरे! यह तो भोर हो गया। तुमने नाँद गाड़ दी दादा?

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

होरी गोबर के सुगठित शरीर और चौड़ी छाती की ओर गर्व से देखकर और मन में यह सोचते हुए कि कहीं इसे गोरस मिलता, तो कैसा पट्ठा हो जाता, बोला -- नहीं, अभी नहीं गाड़ी। सोचा, कहीं न मिले, तो नाहक़ भद्द हो।गोबर ने त्योरी चढ़ाकर कहा -- मिलेगी क्यों नहीं?' उनके मन में कोई चोर पैठ जाय? " चोर पैठे या डाकू, गाय तो उन्हें देनी ही पड़ेगी। 'गोबर ने और कुछ न कहा। लाठी कन्धे पर रखी और चल दिया। होरी उसे जाते देखता हुआ अपना कलेजा ठंठा करता रहा। अब लड़के की सगाई में देर न करनी चाहिये। सत्रहवाँ लग गया; मगर करें कैसे? कहीं पैसे के भी दरसन हों। जब से तीनों भाइयों में अलगौझा हो गया, घर की साख जाती रही। महतो लड़का देखने आते हैं, पर घर की दशा देखकर मुँह फीका करके चले जाते हैं। दो-एक राज़ी भी हुए, तो रुपए माँगते हैं। दो-तीन सौ लड़की का दाम चुकाये और इतना ही ऊपर से ख़र्च करे, तब जाकर ब्याह हो। कहाँ से आये इतने रुपए। रास खलिहान में तुल जाती है। खाने-भर को भी नहीं बचता। ब्याह कहाँ से हो? और अब तो सोना ब्याहने योग्य हो गयी। लड़के का ब्याह न हुआ, न सही। लड़की का ब्याह न हुआ, तो सारी बिरादरी में हँसी होगी। पहले तो उसी की सगाई करनी है, पीछे देखी जायगी। एक आदमी ने आकर राम-राम किया और पूछा -- तुम्हारी कोठी में कुछ बाँस होंगे महतो?होरी ने देखा, दमड़ी बँसार सामने खड़ा है, नाटा काला, ख़ूब मोटा, चौड़ा मुँह, बड़ी-बड़ी मूँछें, लाल आँखें, कमर में बाँस काटने की कटार खोंसे हुए। साल में एक-दो बार आकर चिकें, कुरसियाँ, मोढ़े, टोकरियाँ आदि बनाने के लिए कुछ बाँस काट ले जाता था। होरी प्रसन्न हो गया। मुट्ठी गर्म होने की कुछ आशा बँधी। चौधरी को ले जाकर अपनी तीनों कोठियाँ दिखायीं, मोल-भाव किया और पच्चीस रुपए सैकड़े में पचास बाँसों का बयाना ले लिया। फिर दोनों लौटे। होरी ने उसे चिलम पिलायी, जलपान कराया और तब रहस्यमय भाव से बोला -- मेरे बाँस कभी तीस रुपए से कम में नहीं जाते; लेकिन तुम घर के आदमी हो, तुमसे क्या मोल-भाव करता। तुम्हारा वह लड़का, जिसकी सगाई हुई थी, अभी परदेस से लौटा कि नहीं?चौधरी ने चिलम का दम लगाकर खाँसते हुए कहा -- उस लौंडे के पीछे तो मर मिटा महतो! जवान बहू घर में बैठी थी और वह बिरादरी की एक दूसरी औरत के साथ परदेस में मौज करने चल दिया। बहू भी दूसरे के साथ निकल गयी। बड़ी नाकिस जात है, महतो, किसी की नहीं होती। कितना समझाया कि तू जो चाहे खा, जो चाहे पहन, मेरी नाक न कटवा, मुदा कौन सुनता है। औरत को भगवान् सब कुछ दे, रूप न दे, नहीं वह क़ाबू में नहीं रहती। कोठियाँ तो बँट गयी होंगी? होरी ने आकाश की ओर देखा और मानो उसकी महानता में उड़ता हुआ बोला -- सब कुछ बँट गया चौधरी! जिनको लड़कों की तरह पाला-पोसा, वह अब बराबर के हिस्सेदार हैं; लेकिन भाई का हिस्सा खाने की अपनी नीयत नहीं है। इधर तुमसे रुपए मिलेंगे, उधर दोनों भाइयों को बाँट दूँगा। चार दिन की ज़िन्दगी में क्यों किसी से छल-कपट करूँ। नहीं कह दूँ कि बीस रुपए सैकड़े में बेचे हैं तो उन्हें क्या पता लगेगा। तुम उनसे कहने थोड़े ही जाओगे। तुम्हें तो मैंने बराबर अपना भाई समझा है। व्यवहार में हम ' भाई ' के अर्थ का कितना ही दुरुपयोग करें, लेकिन उसकी भावना में जो पवित्रता है, वह हमारी कालिमा से कभी मलिन नहीं होती। होरी ने अप्रत्यक्ष रूप से यह प्रस्ताव करके चौधरी के मुँह की ओर देखा कि वह स्वीकार करता है या नहीं। उसके मुख पर कुछ ऐसा मिथ्या विनीत भाव प्रकट हुआ जो भिक्षा माँगते समय मोटे भिक्षुकों पर आ जाता है। चौधरी ने होरी का आसन पाकर चाबुक जमाया -- हमारा तुम्हारा पुराना भाई चारा है महतो, ऐसी बात है भला; लेकिन बात यह है कि ईमान आदमी बेचता है, तो किसी लालच से। बीस रुपए नहीं मैं पन्द्रह रुपए कहूँगा; लेकिन जो बीस रुपए के दाम लो। होरी ने खिसियाकर कहा -- तुम तो चौधरी अँधेर करते हो, बीस रुपए में कहीं ऐसे बाँस जाते हैं? ' ऐसे क्या, इससे अच्छे बाँस जाते हैं दस रुपए पर, हाँ दस कोस और पच्छिम चले जाओ। मोल बाँस का नहीं है, शहर के नगीच होने का है। आदमी सोचता है, जितनी देर वहाँ जाने में लगेगी, उतनी देर में तो दो-चार रुपए का काम हो जायगा। 'सौदा पट गया। चौधरी ने मिरज़ई उतार कर छान पर रख दी और बाँस काटने लगा। ऊख की सिंचाई हो रही थी। हीरा-बहू कलेवा लेकर कुएँ पर जा रही थी। चौधरी को बाँस काटते देखकर घूँघट के अन्दर से बोली -- कौन बाँस काटता है? यहाँ बाँस न कटेंगे।चौधरी ने हाथ रोककर कहा -- बाँस मोल लिए हैं, पन्द्रह रुपए सैकड़े का बयाना हुआ है। सेंत में नहीं काट रहे हैं।हीरा-बहू अपने घर की मालकिन थी। उसी के विद्रोह से भाइयों में अलगौझा हुआ था। धनिया को परास्त करके शेर हो गयी थी। हीरा कभी-कभी उसे पीटता था। अभी हाल में इतना मारा था कि वह कई दिन तक खाट से न उठ सकी, लेकिन अपनी पदाधिकार वह किसी तरह न छोड़ती थी। हीरा क्रोध में उसे मारता था; लेकिन चलता था उसी के इशारों पर, उस घोड़े की भाँति जो कभी-कभी स्वामी को लात मारकर भी उसी के आसन के नीचे चलता है। कलेवे की टोकरी सिर से उतार कर बोली -- पन्द्रह रुपए में हमारे बाँस न जायँगे।चौधरी औरत जात से इस विषय में बात-चीत करना नीति-विरुद्ध समझते थे। बोले -- जाकर अपने आदमी को भेज दे। जो कुछ कहना हो, आकर कहें।[5]

हीरा-बहू का नाम था पुन्नी। बच्चे दो ही हुए थे। लेकिन ढल गयी थी। बनाव-सिंगार से समय के आघात का शमन करना चाहती थी, लेकिन गृहस्थी में भोजन ही का ठिकाना न था, सिंगार के लिए पैसे कहाँ से आते। इस अभाव और विवशता ने उसकी प्रकृति का जल सुखाकर कठोर और शुष्क बना दिया था, जिस पर एक बार फावड़ा भी उचट जाता था। समीप आकर चौधरी का हाथ पकड़ने की चेष्टा करती हुई बोली -- आदमी को क्यों भेज दूँ। जो कुछ कहना हो, मुझसे कहो न। मैंने कह दिया, मेरे बाँस न कटेंगे।चौधरी हाथ छुड़ाता था, और पुन्नी बार-बार पकड़ लेती थी। एक मिनट तक यही हाथा-पाई होती रही। अन्त में चौधरी ने उसे ज़ोर से पीछे ढकेल दिया। पुन्नी धक्का खाकर गिर पड़ी; मगर फिर सँभली और पाँव से तल्ली निकालकर चौधरी के सिर, मुँह, पीठ पर अन्धाधुन्ध जमाने लगी। बँसोर होकर उसे ढकेल दे? उसका यह अपमान! मारती जाती थी और रोती भी जाती थी। चौधरी उसे धक्का देकर -- नारी जाति पर बल का प्रयोग करके -- गच्चा खा चुका था। खड़े-खड़े मार खाने के सिवा इस संकट से बचने की उसके पास और कोई दवा

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

न थी। पुन्नी का रोना सुनकर होरी भी दौड़ा हुआ आया। पुन्नी ने उसे देखकर और ज़ोर से चिल्लाना शुरू किया। होरी ने समझा, चौधरी ने पुनिया को मारा है। ख़ून ने जोश मारा और अलगौझे की ऊँची बाँध को तोड़ता हुआ, सब कुछ अपने अन्दर समेटने के लिए बाहर निकल पड़ा। चौधरी को ज़ोर से एक लात जमाकर बोला -- अब अपना भला चाहते हो चौधरी, तो यहाँ से चले जाओ, नहीं तुम्हारी लहास उठेगी। तुमने अपने को समझा क्या है? तुम्हारी इतनी मजाल कि मेरी बहू पर हाथ उठाओ।चौधरी क़समें खा-खाकर अपनी सफ़ाई देने लगा। तल्लियों की चोट में उसकी अपराधी आत्मा मौन थी। यह लात उसे निरपराध मिली और उसके फूले हुए गाल आँसुओं से भींग गये। उसने तो बहू को छुआ भी नहीं। क्या वह इतना गँवार है कि महतो के घर की औरतों पर हाथ उठायेगा। होरी ने अविश्वास करके कहा -- आँखों में धूल मत झोंको चौधरी, तुमने कुछ कहा नहीं, तो बहू झूठ-मूठ रोती है? रुपए की गर्मी है, तो वह निकाल दी जायगी। अलग हैं तो क्या हुआ, हैं तो एक ख़ून। कोई तिरछी आँख से देखे, तो आँख निकाल लें।पुन्नी चंडी बनी हुई थी। गला फाड़कर बोली -- तूने मुझे धक्का देकर गिरा नहीं दिया? खा जा अपने बेटे की क़सम! हीरा को भी ख़बर मिली कि चौधरी और पुनिया में लड़ाई हो रही है। चौधरी ने पुनिया को धक्का दिया। पुनिया ने उसे तल्लियों से पीटा। उसने पुर वहीं छोड़ा और औंगी लिए घटनास्थल की ओर चला। गाँव में अपने क्रोध के लिए प्रसिद्ध था। छोटा डील, गठा हुआ शरीर, आँखें कौड़ी की तरह निकल आयी थीं और गर्दन की नसें तन गयी थी; मगर उसे चौधरी पर क्रोध न था, क्रोध था पुनिया पर। वह क्यों चौधरी से लड़ी? क्यों उसकी इज़्ज़त मिट्टी में मिला दी? बँसोर से लड़ने-झगड़ने का उसे क्या प्रयोजन था? उसे जाकर हीरा से सारा समाचार कह देना चाहिए था। हीरा जैसा उचित समझता, करता। वह उससे लड़ने क्यों गयी? उसका बस होता, तो वह पुनिया को पर्दे में रखता। पुनिया किसी बड़े से मुँह खोलकर बातें करे, यह उसे असह्य था। वह ख़ुद जितना उद्दंड था, पुनिया को उतना ही शान्त रखना चाहता था। जब भैया ने पन्द्रह रुपये में सौदा कर लिया, तो यह बीच में कूदनेवाली कौन! आते ही उसने पुन्नी का हाथ पकड़ लिया और घसीटता हुआ अलग ले जाकर लगा लातें जमाने -- हरामज़ादी, तू हमारी नाक कटाने पर लगी हुई है! तू छोटे-छोटे आदमियों से लड़ती फिरती है, किसकी पगड़ी नीची होती है बता! । (एक लात और जमाकर) हम तो वहाँ कलेऊ की बाट देख रहे हैं, तू यहाँ लड़ाई ठाने बैठी है। इतनी बेसर्मी! आँख का पानी ऐसा गिर गया! खोदकर गाड़ दूँगा।[4]

पुन्नी हाय-हाय करती जाती थी और कोसती जाती थी, ' तेरी मिट्टी उठे, तुझे हैज़ा हो जाय, तुझे मरी आये, देवी मैया तुझे लील जायँ, तुझे इन्फ्लुएंजा हो जाय। भगवान् करे, तू कोढ़ी हो जाय। हाथ-पाँव कट-कट गिरें।और गालियाँ तो हीरा खड़ा-खड़ा सुनता रहा, लेकिन यह पिछली गाली उसे लग गयी। हैज़ा, मरी आदि में विशेष कष्ट न था। इधर बीमार पड़े, उधर विदा हो गये, लेकिन कोढ़! यह घिनौनी मौत, और उससे भी घिनौना जीवन। वह तिलमिला उठा, दाँत पीसता हुआ फिर पुनिया पर झपटा और झोटे पकड़कर फिर उसका सिर ज़मीन पर रगड़ता हुआ बोला -- हाथ-पाव कटकर गिर जायँगे, तो मैं तुझे लेकर चाटूँगा! तू ही मेरे बाल-बच्चों को पालेगी? ऐं! तू ही इतनी बड़ी गिरस्ती चलायेगी? तू तो दूसरा भरतार करके किनारे खड़ी हो जायगी। चौधरी को पुनिया की इस दुर्गति पर दया आ गयी। हीरा को उदारतापूर्वक समझाने लगा -- हीरा महतो, अब जाने दो, बहुत हुआ। क्या हुआ, बहू ने मुझे मारा। मैं तो छोटा नहीं हो गया। धन्य भाग कि भगवान् ने यह तो दिखाया। हीरा ने चौधरी को डाँटा -- तुम चुप रहो चौधरी, नहीं मेरे क्रोध में पड़ जाओगे तो बुरा होगा। औरत जात इसी तरह बकती है। आज को तुमसे लड़ गयी, कल को दूसरों से लड़ जायगी। तुम भले मानस हो, हँसकर टाल गये, दूसरा तो बरदास न करेगा। कहीं उसने भी हाथ छोड़ दिया, तो कितनी आबरू रह जायेगी, बताओ। इस ख़याल ने उसके क्रोध को फिर भड़काया। लपका था कि होरी ने दौड़कर पकड़ लिया और उसे पीछे हटाते हुए बोला -- अरे हो तो गया। देख तो लिया दुनिया ने कि बड़े बहादुर हो। अब क्या उसे पीसकर पी जाओगे? हीरा अब भी बड़े भाई का अदब करता था। सीधे-सीधे न लड़ता था। चाहता तो एक झटके में अपना हाथ छुड़ा लेता; लेकिन इतनी बेअदबी न कर सका। चौधरी की ओर देखकर बोला -- अब खड़े क्या ताकते हो। जाकर अपने बाँस काटो। मैंने सही कर दिया। पन्द्रह रुपए सैकड़े में तय है। कहाँ तो पुन्नी रो रही थी। कहाँ झमककर उठी और अपना सिर पीटकर बोली -- लगा दे घर में आग, मुझे क्या करना है। भाग फूट गया कि तुम-जैसी क़साई के पाले पड़ी। लगा दे घर में आग! उसने कलेऊ की टोकरी वहीं छोड़ दी और घर की ओर चली। हीरा गरजा -- वहाँ कहाँ जाती हैं, चल कुएँ पर, नहीं ख़ून पी जाऊँगा। पुनिया के पाँव रुक गये। इस नाटक का दूसरा अंक न खेलना चाहती थी। चुपके से टोकरी उठाकर रोती हुई कुएँ की ओर चली। हीरा भी पीछे-पीछे चला। होरी ने कहा -- अब फिर मार-धाड़ न करना। इससे औरत बेसरम हो जाती है। धनिया ने द्वार पर आकर हाँक लगायी -- तुम वहाँ खड़े-खड़े क्या तमाशा देख रहे हो। कोई तुम्हारी सुनता भी है कि यों ही शिक्षा दे रहे हो। उस दिन इसी बहू ने तुम्हें घूँघट की आड़ में डाढ़ीजार कहा था, भूल गये। बहुरिया होकर पराये मरदों से लड़ेगी, तो डाँटी न जायेगी। होरी द्वार पर आकर नटखटपन के साथ बोला -- और जो मैं इसी तरह तुझे मारूँ?[3]

' क्या कभी मारा नहीं है, जो मारने की साध बनी हुई है? '

' इतनी बेदरदी से मारता, तो तू घर छोड़कर भाग जाती! पुनिया बड़ी ग़मख़ोर है। '

' ओहो! ऐसे ही तो बड़े दरदवाले हो। अभी तक मार का दाग़ बना हुआ है। हीरा मारता है तो दुलारता भी है। तुमने ख़ाली मारना सीखा, दुलार करना सीखा ही नहीं। मैं ही ऐसी हूँ कि तुम्हारे साथ निबाह हुआ। '

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

' अच्छा रहने दे, बहुत अपना बखान न कर! तू ही रूठ-रूठकर नैहर भागती थी।

' जब महीनों ख़ुशामद करता था, तब जाकर आती थी! '

' जब अपनी गरज सताती थी, तब मनाने जाते थे लाला! मेरे दुलार से नहीं जाते थे। '

' इसी से तो मैं सबसे तेरा बखान करता हूँ। '

वैवाहिक जीवन के प्रभात में लालसा अपनी गुलाबी मादकता के साथ उदय होती है और हृदय के सारे आकाश को अपने माधुर्य की सुनहरी किरणों से रंजित कर देती है। फिर मध्याह्न का प्रखर ताप आता है, क्षण-क्षण पर बगूले उठते हैं, और पृथ्वी काँपने लगती है। लालसा का सुनहरा आवरण हट जाता है और वास्तविकता अपने नग्न रूप में सामने आ खड़ी है। उसके बाद विश्राममय सन्ध्या आती है, शीतल और शान्त, जब हम थके हुए पथिकों की भाँति दिन-भर की यात्रा का वृत्तान्त कहते और सुनते हैं तटस्थ भाव से, मानो हम किसी ऊँचे शिखर पर जा बैठे हैं जहाँ नीचे का जनरूरव हम तक नहीं पहुँचता। धनिया ने आँखों में रस भरकर कहा -- चलो-चलो, बड़े बखान करनेवाले। ज़रा-सा कोई काम बिगड़ जाय, तो गरदन पर सवार हो जाते हो।

होरी ने मीठे उलाहने के साथ कहा -- ले, अब यही तेरी बेइंसाफ़ी मुझे अच्छी नहीं लगती धनिया! भोला से पूछ, मैंने उनसे तेरे बारे में क्या कहा था?

धनिया ने बात बदलकर कहा -- देखो, गोबर गाय लेकर आता है कि ख़ाली हाथ।

चौधरी ने पसीने में लथ-पथ आकर कहा -- महतो, चलकर बाँस गिन लो। कल ठेला लाकर उठा ले जाऊँगा।

होरी ने बाँस गिनने की ज़रूरत न समझी। चौधरी ऐसा आदमी नहीं है। फिर एकाध बाँस बेसी ही काट लेगा, तो क्या। रोज़ ही तो मँगनी बाँस कटते रहते हैं। सहालगों में तो मंडप बनाने के लिए लोग दरजनों बाँस काट ले जाते हैं। चौधरी ने साढ़े सात रुपए निकालकर उसके हाथ में रख दिये। होरी ने गिनकर कहा -- और निकालो।हिसाब से ढाई और होते हैं। चौधरी ने बेमुरौवती से कहा -- पन्द्रह रुपये में तय हुए हैं कि नहीं?

' पन्द्रह रुपए में नहीं, बीस रुपये में। '

' हीरा महतो ने तुम्हारे सामने पन्द्रह रुपये कहे थे। कहो तो बुला लाऊँ। '[2]

' तय तो बीस रुपये में ही हुए थे चौधरी! अब तुम्हारी जीत है, जो चाहो कहो। ढाई रुपये निकलते हैं, तुम दो ही दे दो। 'मगर चौधरी कच्ची गोलियाँ न खेला था। अब उसे किसका डर। होरी के मुँह में तो ताला पड़ा हुआ था। क्या कहे, माथा ठोंककर रह गया। बस इतना बोला -- यह अच्छी बात नहीं है, चौधरी, दो रुपए दबाकर राजा न हो जाओगे। चौधरी तीक्ष्ण स्वर में बोला -- और तुम क्या भाइयों के थोड़े-से पैसे दबाकर राजा हो जाओगे? ढाई रुपये पर अपना ईमान बिगाड़ रहे थे, उस पर मुझे उपदेस देते हो। अभी परदा खोल दूँ, तो सिर नीचा हो जाय।होरी पर जैसे सैकड़ों जूते पड़ गये। चौधरी तो रुपए सामने ज़मीन पर रखकर चला गया; पर वह नीम के नीचे बैठा बड़ी देर तक पछताता रहा। वह कितना लोभी और स्वार्थी, इसका उसे आज पता चला। चौधरी ने ढाई रुपए दे दिये होते, तो वह ख़ुशी से कितना फूल उठता। अपनी चालाकी को सराहता कि बैठे-बैठाये ढाई रुपए मिल गये। ठोकर खाकर ही तो हम सावधानी के साथ पग उठाते हैं। धनिया अन्दर चली गयी थी। बाहर आयी तो रुपए ज़मीन पर पड़े देखे, गिनकर बोली -- और रुपए क्या हुए, दस न चाहिए?होरी ने लम्बा मुँह बनाकर कहा -- हीरा ने पन्द्रह रुपए में दे दिये, तो मैं क्या करता।

' हीरा पाँच रुपए में दे दे। हम नहीं देते इन दामों। '

' वहाँ मार-पीट हो रही थी। मैं बीच में क्या बोलता। '

होरी ने अपनी पराजय अपने मन में ही डाल ली, जैसे कोई चोरी से आम तोड़ने के लिए पेड़ पर चढ़े और गिर पड़ने पर धूल झाड़ता हुआ उठ खड़ा हो कि कोई देख न ले। जीतकर आप अपनी धोखेबाज़ियों की डींग मार सकते हैं; जीत से सब-कुछ माफ़ है। हार की लज्जा तो पी जाने की ही वस्तु है। धनिया पति को फटकारने लगी। ऐसे सुअवसर उसे बहुत कम मिलते थे। होरी उससे चतुर था; पर आज बाज़ी धनिया के हाथ थी। हाथ मटकाकर बोली -- क्यों न हो, भाई ने पन्द्रह रुपये कह दिये, तो तुम कैसे टोकते। अरे राम-राम! लाड़ले भाई का दिल छोटा हो जाता कि नहीं। फिर जब इतना बड़ा अनर्थ हो रहा था कि लाड़ली बहू के गले पर छुरी चल रही थी, तो भला तुम कैसे बोलते। उस बखत कोई तुम्हारा सरबस लूट लेता, तो भी तुम्हें सुध न होती।होरी चुपचाप सुनता रहा। मिनका तक नहीं। झुँझलाहट हुई, क्रोध आया, ख़ून खौला, आँख जली, दाँत पिसे; लेकिन बोला नहीं। चुपके-से कुदाल उठायी और ऊख गोड़ने

IJMRSETM

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

चला। धनिया ने कुदाल छीनकर कहा -- क्या अभी सबेरा है जो ऊख गोड़ने चले? सूरज देवता माथे पर आ गये। नहाने-धोने जाओ। रोटी तैयार है।होरी ने घुन्नाकर कहा -- मुझे भूख नहीं है।धनिया ने जले पर नोन छिड़का -- हाँ काहे को भूख लगेगी। भाई ने बड़े-बड़े लड्डू खिला दिये हैं न! भगवान् ऐसे सपूत भाई सबको दें।1

होरी बिगड़ा। क्रोध अब रस्सियाँ तुड़ा रहा था -- तू आज मार खाने पर लगी हुई है।

धनिया ने नक़ली विनय का नाटक करके कहा -- क्या करूँ, तुम दुलार ही इतना करते हो कि मेरा सिर फिर गया है।

' तू घर में रहने देगी कि नहीं? '

' घर तुम्हारा, मालिक तुम, मैं भला कौन होती हूँ तुम्हें घर से निकालनेवाली। '

होरी आज धनिया से किसी तरह पेश नहीं पा सकता। उसकी अक्ल जैसे कुन्द हो गयी है। इन व्यंग्य-बाणों के रोकने के लिए उसके पास कोई ढाल नहीं है। धीरे से कुदाल रख दी और गमछा लेकर नहाने चला गया। लौटा कोई आध घंटे में; मगर गोबर अभी तक न आया था। अकेले कैसे भोजन करे। लौंडा वहाँ जा कर सो रहा। भोला की वह मदमाती छोकरी है न झुनिया। उसके साथ हँसी-दिल्लगी कर रहा होगा। कल भी तो उसके पीछे लगा हुआ था। नहीं गाय दी, तो लौट क्यों नहीं आया। क्या वहाँ ढई देगा। धनिया ने कहा -- अब खड़े क्या हो? गोबर साँझ को आयेगा।होरी ने और कुछ न कहा। कहीं धनिया फिर न कुछ कह बैठे। भोजन करके नीम की छाँह में लेट रहा। रूपा रोती हुई आई नंगे बदन एक लँगोटी लगाये, झबरे बाल इधर-उधर बिखरे हुए। होरी की छाती पर लोट गयी। उसकी बड़ी बहन सोना कहती है -- गाय आयेगी, तो उसका गोबर मैं पाथूँगी।रूपा यह नहीं बरदाश्त कर सकती। सोना ऐसी कहाँ की बड़ी रानी है कि सारा गोबर आप पाथ डाले। रूपा उससे किस बात में कम है। सोना रोटी पकाती है, तो क्या रूपा बरतन नहीं माँजती? सोना पानी लाती है, तो क्या रूपा कुएँ पर रस्सी नहीं ले जाती? सोना तो कलसा भरकर इठलाती चली आती है। रस्सी समेटकर रूपा ही लाती है। गोबर दोनों साथ पाथती हैं। सोना खेत गोड़ने जाती है, तो क्या रूपा बकरी चराने नहीं जाती? फिर सोना क्यों अकेली गोबर पाथेगी? यह अन्याय रूपा कैसे सहे? होरी ने उसके भोलेपन पर मुग्ध होकर कहा -- नहीं, गाय का गोबर तू पाथना सोना गाय के पास जाये तो भगा देना।रूपा ने पिता के गले में हाथ डालकर कहा -- दूध भी मैं ही दुहूँगी।[2]

' हाँ-हाँ, तू न दुहेगी तो और कौन दुहेगा? '

' वह मेरी गाय होगी। '

'हाँ, सोलहो आने तेरी। '

रूपा प्रसन्न होकर अपनी विजय का शुभ समाचार पराजिता सोना को सुनाने चली गयी। गाय मेरी होगी, उसका दूध मैं दुहूँगी, उसका गोबर मैं पाथूँगी, तुझे कुछ न मिलेगा। सोना उम्र से किशोरी, देह के गठन में युवती और बुद्धि से बालिका थी, जैसे उसका यौवन उसे आगे खींचता था, बालपन पीछे। कुछ बातों में इतनी चतुर कि ग्रेजुएट युवतियों को पढ़ाये, कुछ बातों में इतनी अल्हड़ कि शिशुओं से भी पीछे। लम्बा, रूखा, किन्तु प्रसन्न मुख, ठोड़ी नीचे को खिंची हुई, आँखों में एक प्रकार की तृप्ति न केशों में तेल, न आँखों में काजल, न देह पर कोई आभूषण, जैसे गृहस्थी के भार ने यौवन को दबाकर बौना कर दिया हो। सिर को एक झटका देकर बोली -- जा तू गोबर पाथ। जब तू दूध दुहकर रखेगी तो मैं पी जाऊँगी।[3]

' मैं दूध की हाँड़ी ताले में बन्द करके रखूँगी। '

' मैं ताला तोड़ कर दूध निकाल लाऊँगी। 'यह कहती हुई वह बाग़ की तरफ़ चल दी। आम गदरा गये थे। हवा के झोंकों से एकाध ज़मीन पर गिर पड़ते थे, लू के मारे चुचके, पीले; लेकिन बाल-वृन्द उन्हें टपके समझकर बाग़ को घेरे रहते थे। रूपा भी बहन के पीछे हो ली। जो काम सोना करे, वह रूपा ज़रूर करेगी। सोना के विवाह की बातचीत हो रही थी, रूपा के विवाह की कोई चचार् नहीं करता; इसलिए वह स्वयम् अपने विवाह के लिए आग्रह करती है। उसका दूल्हा कैसा होगा, क्या-क्या लायेगा, उसे कैसे रखेगा, उसे क्या खिलायेगा, क्या पहनायेगा, इसका वह बड़ा विशद वर्णन करती, जिसे सुनकर कदाचित् कोई बालक उससे विवाह करने पर राज़ी न होता। साँझ हो रही थी। होरी ऐसा अलसाया कि ऊख गोड़ने न जा सका। बैलों को नाँद में लगाया, सानी-खली दी और एक चिलम भरकर पीने लगा। इस फ़सल में सब कुछ खलिहान में तौल देने पर भी अभी उस पर कोई तीन सौ क़रज़ था, जिस पर कोई सौ रुपए सूद के बढ़ते जाते थे। मँगरू साह से आज पाँच साल हुए बैल के लिए साठ रुपए लिए थे, उसमें साठ दे चुका था; पर वह साठ रुपए ज्यों-के-त्यों बने हुए थे। दातादीन पण्डित से तीस रुपए लेकर आलू बोये थे। आलू तो चोर खोद ले गये, और उस तीस के इन तीन बरसों में सौ हो गये थे। दुलारी विधवा सहुआइन थी, जो गाँव में नोन तेल तमाखू की दूकान रखे हुए थी। बटवारे के समय उससे चालीस रुपए लेकर भाइयों को देना पड़ा था। उसके भी लगभग सौ रुपए हो गये थे, क्योंकि आने रुपये का ब्याज था। लगान

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

के भी अभी पच्चीस रुपए बाक़ी पड़े हुए थे और दशहरे के दिन शगुन के रुपयों का भी कोई प्रबन्ध करना था। बाँसों के रुपए बड़े अच्छे समय पर मिल गये। शगुन की समस्या हल हो जायगी; लेकिन कौन जाने। यहाँ तो एक धेला भी हाथ में आ जाय, तो गाँव में शोर मच जाता है, और लेनदार चारों तरफ़ से नोचने लगते हैं, ये पाँच रुपये तो वह शगुन में देगा, चाहे कुछ हो जाय; मगर अभी ज़िन्दगी के दो बड़े-बड़े काम सिर पर सवार थे। गोबर और सोना का विवाह। बहुत हाथ बाँधने पर भी तीन सौ से कम ख़र्च न होंगे। ये तीन सौ किसके घर से आयेंगे? कितना चाहता है कि किसी से एक पैसा क़रज़ न ले, जिसका आता है, उसका पाई-पाई चुका दे; लेकिन हर तरह का कष्ट उठाने पर भी गला नहीं छूटता। इसी तरह सूद बढ़ता जायगा और एक दिन उसका घर-द्वार सब नीलाम हो जायगा, उसके बाल-बच्चे निराश्रय होकर भीख माँगते फिरेंगे। होरी जब काम-धन्धे से छुट्टी पाकर चिलम पीने लगता था, तो यह चिन्ता एक काली दीवार की भाँति चारों ओर से घेर लेती थी, जिसमें से निकलने की उसे कोई गली न सूझती थी। अगर सन्तोष था तो यही कि यह विपित्त अकेले उसी के सिर न थी। प्रायःसभी किसानों का यही हाल था। अधिकांश की दशा तो इससे भी बदतर थी। शोभा और हीरा को उससे अलग हुए अभी कुल तीन साल हुए थे; मगर दोनों पर चार-चार सौ का बोझ लद गया। झींगुर दो हल की खेती करता है। उस पर एक हज़ार से कुछ बेसी ही देना है। जियावन महतो के घर-भिखारी भीख भी नहीं पाता; लेकिन करजे का कोई ठिकाना नहीं। यहाँ कौन बचा है। सहसा सोना और रूपा दोनों दौड़ी हुई आयीं और एक साथ बोलीं -- भैया गाय ला रहे हैं। आगे-आगे गाय, पीछे-पछे भीया हैं। रूपा ने पहले गोबर को आते देखा था। यह ख़बर सुनाने की सुर्ख़रूई उसे मिलनी चाहिए थी। सोना बराबर की हिस्सेदार हुई जाती है, यह उससे कैसे सहा जाता। उसने आगे बढ़कर कहा -- पहले मैंने देखा था। तभी दौड़ी। बहन ने तो पीछे से देखा। सोना इस दावे को स्वीकार न कर सकी। बोली -- तूने भैया को कहाँ पहचाना। तू तो कहती थी, कोई गाय भागी आ रही है। मैंने ही कहा, भैया हैं। दोनों फिर बाग़ की तरफ़ दौड़ीं, गाय का स्वागत करने के लिए। धनिया और होरी दोनों गाय बाँधने का प्रबन्ध करने लगे। होरी बोला -- चलो, जल्दी से नाँद गाड़ दें।धनिया के मुख पर जवानी चमक उठी थी -- नहीं, पहले थाली में थोड़ा-सा आटा और गुड़ घोलकर रख दें। बेचारी धूप में चली होगी। प्यासी होगी। तुम जाकर नाँद गाड़ो, मैं घोलती हूँ।[4]

' कहीं एक घंटी पड़ी थी। उसे ढूँढ़ ले। उसके गले में बाँधेंगे। '

' सोना कहाँ गयी। सहुआइन की दुकान से थोड़ा-सा काला डोरा मँगवा लो, गाय को नज़र बहुत लगती है। '

' आज मेरे मन की बड़ी भारी लालसा पूरी हो गयी। 'धनिया अपने हार्दिक उल्लास को दबाये रखना चाहती थी। इतनी बड़ी सम्पदा अपने साथ कोई नयी बाधा न लाये, यह शंका उसके निराश हृदय में कम्पन डाल रही थी। आकाश की ओर देखकर बोली -- गाय के आने का आनन्द तो जब है कि उसका पौरा भी अच्छा हो। भगवान् के मन की बात है। मानो वह भगवान् को भी धोखा देना चाहती थी। भगवान् को भी दिखाना चाहती थी कि इस गाय के आने से उसे इतना आनन्द नहीं हुआ कि ईर्ष्यालु भगवान् सुख का पलड़ा ऊँचा करने के लिए कोई नयी विपत्ति भेज दें। वह अभी आटा घोल ही रही थी कि गोबर गाय को लिये बालकों के एक जुलूस के साथ द्वार पर पहुँचा। होरी दौड़कर गाय के गले से लिपट गया। धनिया ने आटा छोड़ दिया और जल्दी से एक पुरानी साड़ी का काला किनारा फाड़कर गाय के गले में बाँध दिया। होरी श्रद्धा-विह्वल नेत्रों से गाय को देख रहा था, मानो साक्षात् देवीजी ने घर में पदार्पण किया हो। आज भगवान् ने यह दिन दिखाया कि उसका घर गऊ के चरणों से पवित्र हो गया। यह सौभाग्य! न जाने किसके पुण्य-प्रताप से। धनिया ने भयातुर होकर कहा -- खड़े क्या हो, आँगन में नाँद गाड़ दो। आँगन में, जगह कहाँ है? '[5]

' बहुत जगह है। '

' मैं तो बाहर ही गाड़ता हूँ। '

' पागल न बनो। गाँव का हाल जानकर भी अनजान बनते हो। '

' अरे बित्ते-भर के आँगन में गाय कहाँ बँधेगी भाई? '

' जो बात नहीं जानते, उसमें टाँग मत अड़ाया करो। संसार-भर की बिद्या तुम्हीं नहीं पढ़े हो। 'होरी सचमुच आपे में न था। गऊ उसके लिए केवल भक्ति और श्रद्धा की वस्तु नहीं, सजीव सम्पत्ति भी थी। वह उससे अपने द्वार की शोभा और अपने घर का गौरव बढ़ाना चाहता था। वह चाहता था, लोग गाय को द्वार पर बँधे देखकर पूछें -- यह किसका घर है? लोग कहें -- होरी महतो का। तभी लड़कीवाले भी उसकी विभूति से प्रभावित होंगे। आँगन में बँधी, तो कौन देखेगा? धनिया इसके विपरीत सशंक थी। वह गाय को सात परदों के अन्दर छिपाकर रखना चाहती थी। अगर गाय आठों पहर कोठरी में रह सकती, तो शायद वह उसे बाहर न निकालने देती। यों हर बात में होरी की जीत होती थी। वह अपने पक्ष पर अड़ जाता था और धनिया को दबना पड़ता था, लेकिन आज धनिया के सामने होरी की एक न चली। धनिया लड़ने पर तैयार हो गयी। गोबर, सोना और रूपा, सारा घर होरी के पक्ष में था; पर धनिया ने अकेले सब को परास्त कर दिया। आज उसमें एक विचित्र आत्म-विश्वास और होरी में एक विचित्र विनय का उदय हो गया था। मगर तमाशा कैसे रुक सकता था। गाय डोली में बैठकर तो आयी न थी। कैसे सम्भव था कि गाँव में इतनी बड़ी बात हो जाय और तमाशा

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

न लगे। जिसने सुना, सब काम छोड़कर देखने दौड़ा। यह मामूली देशी गऊ नहीं है। भोला के घर से अस्सी रुपये में आयी है। होरी अस्सी रुपए क्या देंगे, पचास-साठ रुपए में लाये होंगे। गाँव के इतिहास में पचास-साठ रुपए की गाय का आना भी अभूतपूर्व बात थी। बैल तो पचास रुपए के भी आये, सौ के भी आये, लेकिन गाय के लिए इतनी बड़ी रक़म किसान क्या खा के ख़र्च करेगा। यह तो ग्वालों ही का कलेजा है कि अँजुलियों रुपए गिन आते हैं। गाय क्या है, साक्षात् देवी का रूप है। दर्शकों, आलोचकों का ताँता लगा हुआ था, और होरी दौड़-दौड़कर सबका सत्कार कर रहा था। इतना विनम्र, इतना प्रसन्न चित्त वह कभी न था। सत्तर साल के बूढ़े पण्डित दातादीन लठिया टेकते हुए आये और पोपले मुँह से बोले -- कहाँ हो होरी, तनिक हम भी तुम्हारी गाय देख लें। सुना बड़ी सुन्दर है।होरी ने दौड़कर पालागन किया और मन में अभिमानमय उल्लास का आनन्द उठाता हुआ, बड़े सम्मान से पण्डितजी को आँगन में ले गया। महाराज ने गऊ को अपनी पुरानी अनुभवी आँखों से देखा, सींगे देखीं, थन देखा, पुट्ठा देखा और घनी सफ़ेद भौंहों के नीचे छिपी हुई आँखों में जवानी की उमंग भरकर बोले -- कोई दोष नहीं है बेटा, बाल-भौंरी, सब ठीक। भगवान् चाहेंगे, तो तुम्हारे भाग खुल जायेंगे, ऐसे अच्छे लच्छन हैं कि वाह! बस रातिब न कम होने पाये। एक-एक बाछा सौ-सौ का होगा।होरी ने आनन्द के सागर में डुबकियाँ खाते हुए कहा -- सब आपका असीरबाद है, दादा! दातादीन ने सुरती की पीक थूकते हुए कहा -- मेरा असीरबाद नहीं है बेटा, भगवान् की दया है। यह सब प्रभु की दया है। रुपए नगद दिये?होरी ने बे-पर की उड़ाई। अपने महाजन के सामने भी अपनी समृद्धि-प्रदर्शन का ऐसा अवसर पाकर वह कैसे छोड़े। टके की नयी टोपी सिर पर रखकर जब हम अकड़ने लगते हैं, ज़रा देर के लिए किसी सवारी पर बैठकर जब हम आकाश में उड़ने लगते हैं, तो इतनी बड़ी विभूति पाकर क्यों न उसका दिमाग़ आसमान पर चढ़े। बोला -- भोला ऐसा भलामानस नहीं है महाराज! नगद गिनाये, पूरे चौकस। अपने महाजन के सामने यह डींग मारकर होरी ने नादानी तो की थी; पर दातादीन के मुख पर असन्तोष का कोई चिह्न न दिखायी दिया। इस कथन में कितना सत्य है, यह उनकी उन बूझी आँखों से छिपा न रह सका जिनमें ज्योति की जगह अनुभव छिपा बैठा था। प्रसन्न होकर बोले -- कोई हरज़ नहीं बेटा, कोई हरज़ नहीं। भगवान् सब कल्यान करेंगे। पाँच सेर दूध है इसमें बच्चे के लिए छोड़कर।धनिया ने तुरन्त टोका -- अरे नहीं महाराज, इतना दूध कहाँ। बुढ़िया तो हो गयी है। फिर यहाँ रातिब कहाँ धरा है। दातादीन ने मर्म-भरी आँखों से देखकर उसकी सतकर्ता को स्वीकार किया, मानो कह रहे हों,[6]

' गृहिणी का यही धर्म है, सीटना मरदों का काम है, उन्हें सीटने दो। '

फिर रहस्य-भरे स्वर में बोले -- बाहर न बाँधना, इतना कहे देते हैं।

धनिया ने पति की ओर विजयी आँखों से देखा, मानो कह रही हो -- लो अब तो मानोगे। दातादीन से बोली -- नहीं महाराज, बाहर क्या बाँधेंगे, भगवान् दें तो इसी आँगन में तीन गायें और बँध सकती हैं।सारा गाँव गाय देखने आया। नहीं आये तो सोभा और हीरा जो अपने सगे भाई थे। होरी के हृदय में भाइयों के लिए अब भी कोमल स्थान था। वह दोनों आकर देख लेते और प्रसन्न हो जाते तो उसकी मनोकामना पूरी हो जाती। साँझ हो गयी। दोनों पुर लेकर लौट आये। इसी द्वार से निकले, पर पूछा कुछ नहीं। होरी ने डरते-डरते धनिया से कहा -- न सोभा आया, न हीरा। सुना न होगा?

धनिया बोली -- तो यहाँ कौन उन्हें बुलाने जाता है।

' तू बात तो समझती नहीं। लड़ने के लिए तैयार रहती है। भगवान् ने जब यह दिन दिखाया है, तो हमें सिर झुकाकर चलना चाहिए। आदमी को अपने संगों के मुँह से अपनी भलाई-बुराई सुनने की जितनी लालसा होती है, बाहरवालों के मुँह से नहीं। फिर अपने भाई लाख बुरे हों, हैं तो अपने भाई ही। अपने हिस्से-बखरे के लिए सभी लड़ते हैं, पर इससे ख़ून थोड़े ही बट जाता है। दोनों को बुलाकर दिखा देना चाहिए। नहीं कहेंगे गाय लाये, हमसे कहा तक नहीं। '

धनिया ने नाक सिकोड़कर कहा -- मैंने तुमसे सौ बार हज़ार बार कह दिया मेरे मुँह पर भाइयों का बखान न किया करो, उनका नाम सुनकर मेरी देह में आग लग जाती है। सारे गाँव ने सुना, क्या उन्होंने न सुना होगा? कुछ इतनी दूर भी तो नहीं रहते। सारा गाँव देखने आया, उन्हीं के पाँवों में मेंहदी लगी हुई थी; मगर आये कैसे? जलन हो रही होगी कि इसके घर गाय आ गयी। छाती फटी जाती होगी।

दिया-बत्ती का समय आ गया था। धनिया ने जाकर देखा, तो बोतल में मिट्टी का तेल न था। बोतल उठा कर तेल लाने चली गयी। पैसे होते, तो रूपा को भेजती, उधार लाना था, कुछ मुँह देखी कहेगी; कुछ लल्लो-चप्पो करेगी, तभी तो तेल उधार मिलेगा। होरी ने रूपा को बुलाकर प्यार से गोद में बैठाया और कहा -- ज़रा जाकर देख, हीरा काका आ गये कि नहीं। सोभा काका को भी देखती आना। कहना, दादा ने तुम्हें बुलाया है। न आये, हाथ पकड़कर खींच लाना।[7]

रूपा ठुनककर बोली -- छोटी काकी मुझे डाँटती है।

' काकी के पास क्या करने जायगी। फिर सोभा-बहू तो तुझे प्यार करती है? '

' सोभा काका मुझे चिढ़ाते हैं, कहते हैं ... मैं न कहूँगी। '

' क्या कहते हैं, बता? '

' चिढ़ाते हैं। '

' क्या कहकर चिढ़ाते हैं? '

' कहते हैं, तेरे लिए मूस पकड़ रखा है। ले जा, भूनकर खा ले। '

होरी के अन्तस्तल में गुदगुदी हुई। ' तू कहती नहीं, पहले तुम खा लो, तो मैं खाऊँगी। '

' अम्माँ मने करती हैं। कहती हैं उन लोगों के घर न जाया करो। '

' तू अम्माँ की बेटी है कि दादा की? '

रूपा ने उसके गले में हाथ डालकर कहा -- अम्माँ की, और हँसने लगी।

' तो फिर मेरी गोद से उतर जा। आज मैं तुझे अपनी थाली में न खिलाऊँगा। '

घर में एक ही फूल की थाली थी, होरी उसी थाली में खाता था। थाली में खाने का गौरव पाने के लिए रूपा होरी के साथ खाती थी। इस गौरव का परित्याग कैसे करे? हुमककर बोली -- अच्छा, तुम्हारी।

' तो फिर मेरा कहना मानेगी कि अम्माँ का? '

' तुम्हारा। '

' तो जाकर हीरा और सोभा को खींच ला। '

' और जो अम्माँ बिगड़ें। '

' अम्माँ से कहने कौन जायगा। '

रूपा कूदती हुई हीरा के घर चली। द्वेष का मायाजाल बड़ी-बड़ी मछलियों को ही फँसाता है। छोटी मछलियाँ या तो उसमें फँसती ही नहीं या तुरन्त निकल जाती हैं। उनके लिए वह घातक जाल क्रीड़ा की वस्तु है, भय की नहीं। भाइयों से होरी की बोलचाल बन्द थी; पर रूपा दोनों घरों में आती-जाती थी। बच्चों से क्या बैर! लेकिन रूपा घर से निकली ही थी कि धनिया तेल लिए मिल गयी। उसने पूछा -- साँझ की बेला कहाँ जाती है, चल घर। रूपा माँ को प्रसन्न करने के प्रलोभन को न रोक सकी।धनिया ने डाँटा -- चल घर, किसी को बुलाने नहीं जाना है। रूपा का हाथ पकड़े हुए वह घर आयी और होरी से बोली -- मैंने तुमसे हज़ार बार कह दियाृ मेरे लड़कों को किसी के घर न भेजा करो। किसी ने कुछ कर-करा दिया, तो मैं तुम्हें लेकर चाटूँगी? ऐसा ही बड़ा परेम है, तो आप क्यों नहीं जाते? अभी पेट नहीं भरा जान पड़ता है।होरी नाँद जमा रहा था। हाथों में मिट्टी लपेटे हुए अज्ञान का अभिनय करके बोला -- किस बात पर बिगड़ती है भाई! यह तो अच्छा नहीं लगता कि अन्धे कूकर की तरह हवा को भूँका करे। धनिया को कुप्पी में तेल डालना था, इस समय झगड़ा न बढ़ाना चाहती थी। रूपा भी लड़कों में जा मिली। पहर रात से ज़्यादा जा चुकी थी। नाँद गड़ चुकी थी। सानी और खली डाल दी गयी थी। गाय मनमारे उदास बैठी थी, जैसे कोई वधू ससुराल आयी हो। नाँद में मुँह तक न डालती थी। होरी और गोबर खाकर आधी-आधी रोटियाँ उसके लिए लाये, पर उसने सूँघा तक नहीं। मगर यह कोई नयी बात न थी। जानवरों को भी बहुधा घर छूट जाने का दुःख होता है। होरी बाहर खाट पर बैठ कर चिलम पीने लगा, तो फिर भाइयों की याद आयी। नहीं, आज इस शुभ अवसर पर वह भाइयों की उपेक्षा नहीं कर सकता। उसका हृदय वह विभूति पाकर विशाल हो गया था। भाइयों से अलग हो गया है, तो क्या हुआ। उनका दुश्मन तो नहीं है। यही गाय तीन साल पहले आयी होती, तो सभी का उस पर बराबर अधिकार होता। और कल को यही गाय दूध देने लगेगी, तो क्या वह भाइयों के घर दूध न भेजेगा या दही न भेजेगा? ऐसा तो उसका धरम नहीं है। भाई उसका बुरा चेतें, वह क्यों उसका बुरा चेते। अपनी-अपनी करनी तो अपने-अपने साथ है। उसने नारियल खाट के पाये से लगाकर रख दिया और हीरा के घर की ओर चला। सोभा का घर भी उधर ही था। दोनों अपने-अपने द्वार पर लेटे हुए थे। काफ़ी अँधेरा था। होरी पर उनमें से किसी की निगाह नहीं पड़ी। दोनों में कुछ बातें हो रही थीं। होरी ठिठक गया और उनकी बातें सुनने लगा। ऐसा आदमी कहाँ है, जो अपनी चर्चा सुनकर टाल जाय। हीरा ने कहा -- जब तक एक में थे, एक बकरी भी नहीं ली। अब पछाई गाय ली जाती है। भाई

का हक़ मारकर किसी को फलते-फूलते नहीं देखा।सोभा बोला -- यह तुम अन्याय कर रहे हो हीरा! भैया ने एक-एक पैसे का हिसाब दे दिया था। यह मैं कभी न मानूँगा कि उन्होंने पहले की कमाई छिपा रखी थी।[6]

' तुम मानो चाहे न मानो, है यह पहले की कमाई। '

' किसी पर झूठा इलज़ाम न लगाना चाहिए। '

' अच्छा तो यह रुपए कहाँ से आ गये? कहाँ से हुन बरस पड़ा। उतने ही खेत तो हमारे पास भी हैं। उतनी ही उपज हमारी भी है। फिर क्यों हमारे पास कफ़न को कौड़ी नहीं और उनके घर नयी गाय आती है? '

' उधार लाये होंगे। '

' भोला उधार देनेवाला आदमी नहीं है। '

' कुछ भी हो, गाय है बड़ी सुन्दर, गोबर लिये जाता था, तो मैंने रास्ते में देखा। '

' बेईमानी का धन जैसे आता है, वैसे ही जाता है। भगवान् चाहेंगे, तो बहुत दिन गाय घर में न रहेगी। 'होरी से और न सुना गया। वह बीती बातों को बिसारकर अपने हृदय में स्नेह और सौहार्द भरे भाइयों के पास आया था। इस आघात ने जैसे उसके हृदय में छेद कर दिया और वह रस-भाव उसमें किसी तरह नहीं टिक रहा था। लत्ते और चिथड़े ठूँसकर अब उस प्रवाह को नहीं रोक सकता। जी में एक उबाल आया कि उसी क्षण इस आक्षेप का जवाब दे; लेकिन बात बढ़ जाने के भय से चुप रह गया। अगर उसकी नीयत साफ़ है, तो कोई कुछ नहीं कर सकता। भगवान् के सामने वह निर्दोष है। दूसरों की उसे परवाह नहीं। उलटे पाँव लौट आया। और वह जला हुआ तम्बाकू पीने लगा। लेकिन जैसे वह विष प्रतिक्षण उसकी धमनियों में फैलता जाता था। उसने सो जाने का प्रयास किया, पर नींद न आयी। बैलों के पास जाकर उन्हें सहलाने लगा, विष शान्त न हुआ। दूसरी चिलम भरी; लेकिन उसमें भी कुछ रस न था। विष ने जैसे चेतना को आक्तान्त कर दिया हो। जैसे नशे में चेतना एकांगी हो जाती है, जैसे फैला हुआ पानी एक दिशा में बहकर वेगवान हो जाता है, वही मनोवृत्ति उसकी हो रही थी। उसी उन्माद की दशा में वह अन्दर गया। अभी द्वार खुला हुआ था। आँगन में एक किनारे चटाई पर लेटी हुई धनिया सोना से देह दबवा रही थी और रूपा जो रोज़ साँझ होते ही सो जाती थी, आज खड़ी गाय का मुँह सहला रही थी। होरी ने जाकर गाय को खूँटे से खोल लिया और द्वार की ओर ले चला। वह इसी वक़्त गाय को भोला के घर पहुँचाने का दृढ़ निश्चय कर चुका था। इतना बड़ा कलंक सिर पर लेकर वह अब गाय को घर में नहीं रख सकता। किसी तरह नहीं। धनिया ने पूछा -- कहाँ लिये जाते हो रात को? होरी ने एक पग बढ़ाकर कहा -- ले जाता हूँ भोला के घर। लौटा दूँगा।धनिया को विस्मय हुआ, उठकर सामने आ गयी और बोली -- लौटा क्यों दोगे? लौटाने के लिए ही लाये थे।' हाँ इसके लौटा देने में ही कुशल है? '[5]

' क्यों बात क्या है? इतने अरमान से लाये और अब लौटाने जा रहे हो? क्या भोला रुपए माँगते हैं? '

' नहीं, भोला यहाँ कब आया? '

' तो फिर क्या बात हुई? '

' क्या करोगी पूछकर? '

धनिया ने लपककर पगहिया उसके हाथ से छीन ली। उसकी चपल बुद्धि ने जैसे उड़ती हुई चिड़िया पकड़ ली। बोली -- तुम्हें भाइयों का डर हो, तो जाकर उसके पैरों पर गिरो। मैं किसी से नहीं डरती। अगर हमारी बढ़ती देखकर किसी की छाती फटती है, तो फट जाय, मुझे परवाह नहीं है।

होरी ने विनीत स्वर में कहा -- धीरे-धीरे बोल महरानी! कोई सुने, तो कहे, ये सब इतनी रात गये लड़ रहे हैं! मैं अपने कानों से क्या सुन आया हूँ, तू क्या जाने! यहाँ चरचा हो रही है कि मैंने अलग होते समय रुपए दबा लिये थे और भाइयों को धोखा दिया था, यही रुपए अब निकल रहे हैं। '

' हीरा कहता होगा? '

' सारा गाँव कह रहा है! हीरा को क्यों बदनाम करूँ। " सारा गाँव नहीं कह रहा है, अकेला हीरा कह रहा है। मैं अभी जाकर पूछती हूँ न कि तुम्हारे बाप कितने रुपए छोड़कर मरे थे। डाढ़ीजारों के पीछे हम बरबाद हो गये, सारी ज़िन्दगी मिट्टी में मिला दी, पाल-पोसकर संडा किया, और अब हम बेईमान हैं! मैं कहे देती हूँ, अगर गाय घर के बाहर निकली, तो अनर्थ हो जायगा। रख लिये हमने रुपए, दबा लिये, बीच खेत दबा लिये। डंके की चोट कहती हूँ, मैंने हंडे भर अशर्फ़ियाँ छिपा लीं। हीरा और सोभा और संसार को जो करना

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

हो, कर ले। क्यों न रुपए रख लें? दो-दो संडों का ब्याह नहीं किया, गौना नहीं किया?होरी सिटपिटा गया। धनिया ने उसके हाथ से पगहिया छीन ली, और गाय को खूँटे से बाँधकर द्वार की ओर चली। होरी ने उसे पकड़ना चाहा; पर वह बाहर जा चुकी थी। वहीं सिर थामकर बैठ गया। बाहर उसे पकड़ने की चेष्टा करके वह कोई नाटक नहीं दिखाना चाहता था। धनिया के क्रोध को ख़ूब जानता था। बिगड़ती है, तो चंडी बन जाती है। मारो, काटो, सुनेगी नहीं; लेकिन हीरा भी तो एक ही ग़ुस्सेवर है। कहीं हाथ चला दे तो परलै ही हो जाय। नहीं, हीरा इतना मूरख नहीं है। मैंने कहाँ-से-कहाँ यह आग लगा दी। उसे अपने आप पर क्रोध आने लगा। बात मन में रख लेता, तो क्यों यह टंटा खड़ा होता। सहसा धनिया का ककर्श स्वर कान में आया। हीरा की गरज भी सुन पड़ी। फिर पुन्नी की पैनी पीक भी कानों में चुभी। सहसा उसे गोबर की याद आयी। बाहर लपककर उसकी खाट देखी। गोबर वहाँ न था। ग़ज़ब हो गया! गोबर भी वहाँ पहुँच गया। अब कुशल नहीं। उसका नया ख़ून है, न जाने क्या कर बैठे; लेकिन होरी वहाँ कैसे जाय? हीरा कहेगा, आप बोलते नहीं, जाकर इस डाइन को लड़ने के लिए भेज दिया। कोलाहल प्रतिक्षण प्रचंड होता जाता था। सारे गाँव में जाग पड़ गयी। मालूम होता था, कहीं आग लग गयी है, और लोग खाट से उठ-उठ बुझाने दौड़े जा रहे हैं। इतनी देर तक तो वह ज़ब्त किये बैठा रहा। फिर न रह गया। धनिया पर क्रोध आया। वह क्यों चढ़कर लड़ने गयी। अपने घर में आदमी न जाने किसको क्या कहता है। जब तक कोई मुँह पर बात न कहे, यही समझना चाहिए कि उसने कुछ नहीं कहा। होरी की कृषक प्रकृति झगड़े से भागती थी। चार बातें सुनकर ग़म खा जाना इससे कहीं अच्छा है कि आपस में तनाज़ा हो। कहीं मार-पीट हो जाय तो थाना-पुलिस हो, बँधे-बँधे फिरो, सब की चिरौरी करो, अदालत की धूल फाँको, खेती-बारी जहन्नुम में मिल जाय। उसका हीरा पर तो कोई बस न था; मगर धनिया को तो वह ज़बरदस्ती खींच ला सकता है। बहुत होगा, गालियाँ दे लेगी, एक-दो दिन रूठी रहेगी, थाना-पुलिस की नौबत तो न आयेगी। जाकर हीरा के द्वार पर सबसे दूर दीवार की आड़ में खड़ा हो गया। एक सेनापति की भाँति मैदान में आने के पहले परिस्थिति को अच्छी तरह समझ लेना चाहता था। अगर अपनी जीत हो रही है, तो बोलने की कोई ज़रूरत नहीं; हार हो रही है, तो तुरन्त कूद पड़ेगा। देखा तो वहाँ पचासों आदमी जमा हो गये हैं। पण्डित दातादीन, लाला पटेश्वरी, दोनों ठाकुर, जो गाँव के करता-धरता थे, सभी पहुँचे हुए हैं। धनिया का पल्ला हलका हो रहा था। उसकी उग्रता जनमत को उसके विरुद्ध किये देती थी। वह रणनीति में कुशल न थी। क्रोध में ऐसी जली-कटी सुना रही थी कि लोगों की सहानुभूति उससे दूर होती जाती थी। वह गरज रही थी -- तू हमें देखकर क्यों जलता है? हमें देखकर क्यों तेरी छाती फटती है? पाल-पोसकर जवान कर दिया, यह उसका इनाम है? हमने न पाला होता तो आज कहीं भीख माँगते होते। रूख की छाँह भी न मिलती।होरी को ये शब्द ज़रूरत से ज़्यादा कठोर जान पड़े। भाइयों का पालना-पोसना तो उसका धर्म था। उनके हिस्से की जायदाद तो उसके हाथ में थी। कैसे न पालता-पोसता? दुनिया में कहीं मुँह दिखाने लायक़ रहता? हीरा ने जवाब दिया -- हम किसी का कुछ नहीं जानते। तेरे घर में कुत्तों की तरह एक टुकड़ा खाते थे और दिन-भर काम करते थे। जाना ही नहीं कि लड़कपन और जवानी कैसी होती है। दिन-दिन भर सूखा गोबर बीना करते थे। उस पर भी तू बिना दस गाली दिये रोटी न देती थी। तेरी-जैसी राच्छसिन के हाथ में पड़कर ज़िन्दगी तलख़ हो गयी।धनिया और भी तेज़ हुई -- ज़बान सँभाल, नहीं जीभ खींच लूँगी। राच्छसिन तेरी औरत होगी। तू है किस फेर में मूँड़ी-काटे, टुकड़े-ख़ोर, नमक-हराम।[4]

दातादीन ने टोका -- इतना कटु-वचन क्यों कहती है धनिया? नारी का धरम है कि ग़म खाय। वह तो उजड्ड है, क्यों उसके मुँह लगती है?लाला पटेश्वरी पटवारी ने उसका समर्थन किया -- बात का जवाब बात है, गाली नहीं। तूने लड़कपन में उसे पाला-पोसा; लेकिन यह क्यों भूल जाती है कि उसकी जायदाद तेरे हाथ में थी? धनिया ने समझा, सब-के-सब मिलकर मुझे नीचा दिखाना चाहते हैं। चौमुख लड़ाई लड़ने के लिए तैयार हो गयी -- अच्छा, रहने दो लाला! मैं सबको पहचानती हूँ। इस गाँव में रहते बीस साल हो गये। एक-एक की नस-नस पहचानती हूँ। मैं गाली दे रही हूँ, वह फूल बरसा रहा है, क्यों?दुलारी सहुआइन ने आग पर घी डाला -- बाक़ी बड़ी गाल-दराज़ औरत है भाई! मरद के मुँह लगती है। होरी ही जैसा मरद है कि इसका निबाह होता है। दूसरा मरद होता तो एक दिन न पटती। अगर हीरा इस समय ज़रा नर्म हो जाता, तो उसकी जीत हो जाती; लेकिन ये गालियाँ सुनकर आपे से बाहर हो गया। औरों को अपने पक्ष में देखकर वह कुछ शेर हो रहा था। गला फाड़कर बोला -- चली जा मेरे द्वार से, नहीं जूतों से बात करूँगा। झोंटा पकड़कर उखाड़ लूँगा। गाली देती है डाइन! बेटे का घमंड हो गया है। ख़ून ...पाँसा पलट गया। होरी का ख़ून खौल उठा। बारूद में जैसे चिनगारी पड़ गयी हो। आगे आकर बोला -- अच्छा बस, अब चुप हो जाओ हीरा, अब नहीं सुना जाता। मैं इस औरत को क्या कहूँ। जब मेरी पीठ में धूल लगती है, तो इसी के कारन। न जाने क्यों इससे चुप नहीं रहा जाता।चारों ओर से हीरा पर बौछार पड़ने लगी। दातादीन ने निर्लज्ज कहा, पटेश्वरी ने गुंडा बनाया, झिंगुरीसिंह ने शैतान की उपाधि दी। दुलारी सहुआइन ने कपूत कहा। एक उद्दंड शब्द ने धनिया का पल्ला हल्का कर दिया था। दूसरे उग्र शब्द ने हीरा को गच्चे में डाल दिया। उस पर होरी के संयत वाक्य ने रही-सही कसर भी पूरी कर दी। हीरा सँभल गया। सारा गाँव उसके विरुद्ध हो गया। अब चुप रहने में ही उसकी कुशल है। क्रोध के नशे में भी इतना होश उसे बाक़ी था। धनिया का कलेजा दूना हो गया। होरी से बोली -- सुन लो कान खोल के। भाइयों के लिए मरते रहते हो। ये भाई हैं, ऐसे भाई का मुँह न देखे। यह मुझे जूतों से मारेगा। खिला-पिला...

होरी ने डाँटा -- फिर क्यों बक-बक करने लगी तू! घर क्यों नहीं जाती?

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

धनिया ज़मीन पर बैठ गयी और आर्त स्वर में बोली -- अब तो इसके जूते खा के जाऊँगी। ज़रा इसकी मरदूमी देख लूँ, कहाँ है गोबर? अब किस दिन काम आयेगा? तू देख रहा है बेटा, तेरी माँ को जूते मारे जा रहे हैं!यों विलाप करके उसने अपने क्रोध के साथ होरी के क्रोध को भी क्रियाशील बना डाला। आग को फूँक-फूँक कर उसमें ज्वाला पैदा कर दी। हीरा पराजित-सा पीछे हट गया। पुन्नी उसका हाथ पकड़कर घर की ओर खींच रही थी। सहसा धनिया ने सिंहनी की भाँति झपटकर हीरा को इतने ज़ोर से धक्का दिया कि वह धम से गिर पड़ा और बोली -- कहाँ जाता है, जूते मार, मार जूते, देखूँ तेरी मरदूमी!होरी ने दौड़कर उसका हाथ पकड़ लिया और घसीटता हुआ घर ले चला।3

5.उधर गोबर खाना खाकर अहिराने में पहुँचा। आज झुनिया से उसकी बहुत-सी बातें हुई थीं। जब वह गाय लेकर चला था, तो झुनिया आधे रास्ते तक उसके साथ आयी थी। गोबर अकेला गाय को कैसे ले जाता। अपरिचित व्यक्ति के साथ जाने में उसे आपत्ति होना स्वाभाविक था। कुछ दूर चलने के बाद झुनिया ने गोबर को मर्मभरी आँखों से देखकर कहा -- अब तुम काहे को यहाँ कभी आओगे। एक दिन पहले तक गोबर कुमार था। गाँव में जितनी युवतियाँ थीं, वह या तो उसकी बहनें थीं या भाभियाँ। बहनों से तो कोई छेड़छाड़ हो ही क्या सकती थी, भाभियाँ अलबत्ता कभी-कभी उससे ठठोली किया करती थीं, लेकिन वह केवल सरल विनोद होता था। उनकी दृष्टि में अभी उसके यौवन में केवल फूल लगे थे। जब तक फल न लग जायँ, उस पर ढेले फेंकना व्यर्थ की बात थी। और किसी ओर से प्रोत्साहन न पाकर उसका कौमार्य उसके गले से चिपटा हुआ था। झुनिया का वंचित मन, जिसे भाभियों के व्यंग और हास-विलास ने और भी लोलुप बना दिया था, उसके कौमार्य ही पर ललचा उठा। और उस कुमार में भी पत्ता खड़कते ही किसी सोये हुए शिकारी जानवर की तरह यौवन जाग उठा।गोबर ने आवरण-हीन रसिकता के साथ कहा -- अगर भिक्षुक को भीख मिलने की आसा हो, तो वह दिन-भर और रात-भर दाता के द्वार पर खड़ा रहे। झुनिया ने कटाक्ष करके कहा -- तो यह कहो तुम भी मतलब के यार हो। गोबर की धमनियों का रक्त प्रबल हो उठा। बोला -- भूखा आदमी अगर हाथ फैलाये तो उसे क्षमा कर देना चाहिए।झुनिया और गहरे पानी में उतरी -- भिक्षुक जब तक दस द्वारे न जाय, उसका पेट कैसे भरेगा। मैं ऐसे भिक्षुकों को मुँह नहीं लगाती। ऐसे तो गली-गली मिलते हैं। फिर भिक्षुक देता क्या है, असीस! असीसों से तो किसी का पेट नहीं भरता। मन्द-बुद्धि गोबर झुनिया का आशय न समझ सका। झुनिया छोटी-सी थी तभी से ग्राहकों के घर दूध लेकर जाया करती थी। ससुराल में उसे ग्राहकों के घर दूध पहुँचाना पड़ता था। आजकल भी दही बेचने का भार उसी पर था। उसे तरह-तरह के मनुष्यों से साबिक़ा पड़ चुका था। दो-चार रुपए उसके हाथ लग जाते थे, घड़ी-भर के लिए मनोरंजन भी हो जाता था; मगर यह आनन्द जैसे मँगनी की चीज़ हो। उसमें टिकाव न था, समर्पण न था, अधिकार न था। वह ऐसा प्रेम चाहती थी, जिसके लिए वह जिये और मरे, जिस पर वह अपने को समर्पित कर दे। वह केवल जुगनू की चमक नहीं, दीपक का स्थायी प्रकाश चाहती थी। वह एक गृहस्थ की बालिका थी, जिसके गृहिणीत्व को रसिकों की लगावटबाज़ियों ने कुचल नहीं पाया था। गोबर ने कामना से उद्दीप्त मुख से कहा -- भिक्षुक को एक ही द्वार पर भरपेट मिल जाय, तो क्यों द्वार-द्वार घूमे?

झुनिया ने सदय भाव से उसकी ओर ताका। कितना भोला है, कुछ समझता ही नहीं। ' भिक्षुक को एक द्वार पर भरपेट कहाँ मिलता है। उसे तो चुटकी ही मिलेगी। सर्बस तो तभी पाओगे, जब अपना सर्बस दोगे। '

' मेरे पास क्या है झुनिया? '

' तुम्हारे पास कुछ नहीं है? मैं तो समझती हूँ, मेरे लिए तुम्हारे पास जो कुछ है, वह बड़े-बड़े लखपतियों के पास नहीं है। तुम मुझसे भीख न माँगकर मुझे मोल ले सकते हो। '2

गोबर उसे चकित नेत्रों से देखने लगा। झुनिया ने फिर कहा -- और जानते हो, दाम क्या देना होगा? मेरा होकर रहना पड़ेगा। फिर किसी के सामने हाथ फैलाये देखूँगी, तो घर से निकाल दूँगी। गोबर को जैसे अँधेरे में टटोलते हुए इच्छित वस्तु मिल गयी। एक विचित्र भय-मिश्रित आनन्द से उसका रोम-रोम पुलकित हो उठा। लेकिन यह कैसे होगा? झुनिया को रख ले, तो रखेली को लेकर घर में रहेगा कैसे। बिरादरी का झंझट जो है। सारा गाँव काँव-काँव करने लगेगा। सभी दुसमन हो जायँगे। अम्माँ तो इसे घर में घुसने भी न देगी। लेकिन जब स्त्री होकर यह नहीं डरती, तो पुरुष होकर वह क्यों डरे। बहुत होगा, लोग उसे अलग कर देंगे। वह अलग ही रहेगा। झुनिया जैसी औरत गाँव में दूसरी कौन है? कितनी समझदारी की बातें करती है। क्या जानती नहीं कि मैं उसके जोग नहीं हूँ। फिर भी मुझसे प्रेम करती है। मेरी होने को राज़ी है। गाँववाले निकाल देंगे, तो क्या संसार में दूसरा गाँव ही नहीं है? और गाँव क्यों छोड़े? मातादीन ने चमारिन बैठा ली, तो किसी ने क्या कर लिया। दातादीन दाँत कटकटाकर रह गये। मातादीन ने इतना ज़रूर किया कि अपना धरम बचा लिया। अब भी बिना असनान-पूजा किये मुँह में पानी नहीं डालते। दोनों जून अपना भोजन आप पकाते हैं और अब तो अलग भोजन नहीं पकाते। दातादीन और वह साथ बैठकर खाते हैं। झिंगुरीसिंह ने बाम्हनी रख ली, उनका किसी ने क्या कर लिया? उनका जितना आदर-मान तब था, उतना ही आज भी है; बल्कि और बढ़ गया। पहले नौकरी खोजते फिरते थे। अब उसके रुपए से महाजन बन बैठे। ठकुराई का रोब तो था ही, महाजनी का रोब भी जम गया। मगर फिर ख़्याल आया, कहीं झुनिया दिल्लगी न कर रही हो। पहले इसकी ओर से निश्चिन्त हो जाना आवश्यक था। उसने पूछा -- मन से कहती हो झूना कि ख़ाली लालच दे रही हो? मैं तो तुम्हारा हो चुका; लेकिन तुम भी हो जाओगी?' तुम मेरे हो चुके, कैसे जानूँ? '1

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

' तुम जान भी चाहो, तो दे दूँ। '

' जान देने का अरथ भी समझते हो? '

' तुम समझा दो न। '

' जान देने का अरथ है, साथ रहकर निबाह करना। एक बार हाथ पकड़कर उमिर भर निबाह करते रहना, चाहे दुनिया कुछ कहे, चाहे माँ-बाप, भाई-बन्द, घर-द्वार सब कुछ छोड़ना पड़े। मुँह से जान देनेवाले बहुतों को देख चुकी। भौरों की भाँति फूल का रस लेकर उड़ जाते हैं। तुम भी वैसे ही न उड़ जाओगे? ' बर के एक हाथ में गाय की पगहिया थी। दूसरे हाथ से उसने झुनिया का हाथ पकड़ लिया। जैसे बिजली के तार पर हाथ गया हो। सारी देह यौवन के पहले स्पर्श से काँप उठी। कितनी मुलायम, गुदगुदी, कोमल कलाई! झुनिया ने उसका हाथ हटाया नहीं, मानो इस स्पर्श का उसके लिए कोई महत्व ही न हो। फिर एक क्षण के बाद गम्भीर भाव से बोली -- आज तुमने मेरा हाथ पकड़ा है, याद रखना।' ख़ूब याद रखूँगा झूना और मरते दम तक निबाहूँगा।[2]

झुनिया अविश्वास-भरी मुस्कान से बोली -- इसी तरह तो सब कहते हैं गोबर! बल्कि इससे भी मीठे, चिकने शब्दों में। अगर मन में कपट हो, मुझे बता दो। सचेत हो जाऊँ। ऐसों को मन नहीं देती। उनसे तो ख़ाली हँस-बोल लेने का नाता रखती हूँ। बरसों से दूध लेकर बाज़ार जाती हूँ। एक-से-एक बाबू, महाजन, ठाकुर, वकील, अमले, अफ़सर अपना रसियापन दिखाकर मुझे फँसा लेना चाहते हैं। कोई छाती पर हाथ रखकर कहता है, झुनिया, तरसा मत; कोई मुझे रसीली, नसीली चितवन से घूरता है, मानो मारे प्रेम के बेहोश हो गया है, कोई रुपए दिखाता है, कोई गहने। सब मेरी ग़ुलामी करने को तैयार रहते हैं, उमिर भर, बल्कि उस जनम में भी, लेकिन मैं उन सबों की नस पहचानती हूँ। सब-के-सब भौंरे रस लेकर उड़ जानेवाले। मैं भी उन्हें ललचाती हूँ, तिरछी नज़रों से देखती हूँ, मुसकराती हूँ। वह मुझे गधी बनाते हैं, मैं उन्हें उल्लू बनाती हूँ। मैं मर जाऊँ, तो उनकी आँखों में आँसू न आयेगा। वह मर जायँ, तो मैं कहूँगी, अच्छा हुआ, निगोड़ा मर गया। मैं तो जिसकी हो जाऊँगी, उसकी जनम-भर के लिए हो जाऊँगी, सुख में, दुःख में, सम्पत में, बिपत में, उसके साथ रहूँगी। हरजाई नहीं हूँ कि सबसे हँसती-बोलती फिरूँ। न रुपए की भूखी हूँ, न गहने-कपड़े की। बस भले आदमी का संग चाहती हूँ, जो मुझे अपना समझे और जिसे मैं भी अपना समझूँ। एक पण्डित जी बहुत तिलक-मुद्रा लगाते हैं। आध सेर दूध लेते हैं। एक दिन उनकी घरवाली कहीं नेवते में गयी थी। मुझे क्या मालूम। और दिनों की तरह दूध लिये भीतर चली गयी। वहाँ पुकारती हूँ, बहूजी, बहूजी! कोई बोलता ही नहीं। इतने में देखती हूँ तो पण्डितजी बाहर के किवाड़ बन्द किये चले आ रहे हैं। मैं समझ गयी इसकी नीयत ख़राब है। मैंने डाँटकर पूछा -- तुमने किवाड़ क्यों बन्द कर लिये? क्या बहूजी कहीं गयी हैं? घर में सन्नाटा क्यों है? उसने कहा -- वह एक नेवते में गयी हैं; और मेरी ओर दो पग और बढ़ आया। मैंने कहा -- तुम्हें दूध लेना हो तो लो, नहीं मैं जाती हूँ। बोला -- आज तो तुम यहाँ से न जाने पाओगी झूनी रानी, रोज़-रोज़ कलेजे पर छुरी चलाकर भाग जाती हो, आज मेरे हाथ से न बचोगी। तुमसे सच कहती हूँ, गोबर, मेरे रोएँ खड़े हो गये। गोबर आवेश में बोला -- मैं बच्चा को देख पाऊँ, तो खोदकर ज़मीन में गाड़ दूँ। ख़ून चूस लूँ। तुम मुझे दिखा तो देना। ' सुनो तो, ऐसों का मुँह तोड़ने के लिए मैं ही काफ़ी हूँ। मेरी छाती धक-धक करने लगी। यह कुछ बदमासी कर बैठे, तो क्या करूँगी। कोई चिल्लाना भी तो न सुनेगा; लेकिन मन में यह निश्चय न कर लिया था कि मेरी देह छुई, तो दूध की भरी हाँड़ी उसके मुँह पर पटक दूँगी। बला से चार-पाँच सेर दूध जायगा, बचा को याद तो हो जायगी। कलेजा मज़बूत करके बोली -- इस फेर में न रहना पण्डितजी! मैं अहीर की लड़की हूँ। मूँछ का एक-एक बाल चुनवा लूँगी। यही लिखा है तुम्हारे पोथी-पत्रे में कि दूसरों की बहू-बेटी को अपने घर में बन्द करके बेईज़्ज़त करो। इसीलिए तिलक-मुद्रा का जाल बिछाये बैठे हो? लगा हाथ जोड़ने, पैरों पड़ने -- एक प्रेमी का मन रख दोगी, तो तुम्हारा क्या बिगड़ जायगा, झूना रानी! कभी-कभी ग़रीबों पर दया किया करो, नहीं भगवान् पूछेंगे, मैंने तुम्हें इतना रूपधन दिया था, तुमने उससे एक ब्राह्मण का उपकार भी नहीं किया, तो क्या जवाब दोगी? बोले, मैं विप्र हूँ, रुपए-पैसे का दान तो रोज़ ही पाता हूँ, आज रूप का दान दे दो। ' मैंने यों ही उसका मन परखने को कह दिया, मैं पचास रुपए लूँगी। सच कहती हूँ गोबर, तुरन्त कोठरी में गया और दस-दस के पाँच नोट निकालकर मेरे हाथों में देने लगा और जब मैंने नोट ज़मीन पर गिरा दिये और द्वार की ओर चली, तो उसने मेरा हाथ पकड़ लिया। मैं तो पहले ही से तैयार थी। हाँड़ी उसके मुँह पर दे मारी। सिर से पाँव तक सराबोर हो गया। चोट भी ख़ूब लगी। सिर पकड़कर बैठ गया और लगा हाय-हाय करने। मैंने देखा, अब यह कुछ नहीं कर सकता, तो पीठ में दो लातें जमा दीं और किवाड़ खोलकर भागी। ' गोबर ठट्ठा मारकर बोला -- बहुत अच्छा किया तुमने। दूध से नहा गया होगा। तिलक-मुद्रा भी धुल गयी होगी। मूँछें भी क्यों न उखाड़ लीं? ' दूसरे दिन मैं फिर उसके घर गयी। उसकी घरवाली आ गयी थी। अपने बैठक में सिर में पट्टी बाँधे पड़ा था। मैंने कहा -- कहो तो कल की तुम्हारी करतूत खोल दूँ पण्डित ! लगा हाथ जोड़ने। मैंने कहा -- अच्छा थूककर चाटो, तो छोड़ दूँ। सिर ज़मीन पर रगड़कर कहने लगा -- अब मेरी इज़्ज़त तुम्हारे हाथ है झूना, यही समझ लो कि पण्डिताइन मुझे जीता न छोड़ेंगी। मुझे भी उस पर दया आ गयी। ' गोबर को उसकी दया बुरी लगी -- यह तुमने क्या किया? उसकी औरत से जाकर कह क्यों नहीं दिया? जूतों से पीटती। ऐसे पाखण्डियों पर दया न करनी चाहिए। तुम मुझे कल उनकी सूरत दिखा दो, फिर देखना कैसी मरम्मत करता हूँ। झुनिया ने उसके अर्ध-विकसित यौवन को देखकर कहा -- तुम उसे न पाओगे। ख़ासा देव है। मुफ़्त का माल उड़ाता है कि नहीं। गोबर अपने यौवन का यह तिरस्कार कैसे सहता। डींग मारकर बोला --

मोटे होने से क्या होता है। यहाँ फ़ौलाद की हड्डियाँ हैं। तीन सौ डंड रोज़ मारता हूँ। दूध-घी नहीं मिलता, नहीं अब तक सीना यों निकल आया होता। यह कहकर उसने छाती फैला कर दिखायी। झुनिया ने आश्वस्त आँखों से देखा -- अच्छा, कभी दिखा दूँगी। लेकिन यहाँ तो सभी एक-से हैं, तुम किस-किस की मरम्मत करोगे। न जाने मरदों की क्या आदत है कि जहाँ कोई जवान, सुन्दर औरत देखी और बस लगे घूरने, छाती पीटने। और यह जो बड़े आदमी कहलाते हैं, ये तो निरे लम्पट होते हैं। फिर मैं तो कोई सुन्दरी नहीं हूँ ... । गोबर ने आपत्ति की -- तुम! तुम्हें देखकर तो यही जी चाहता है कि कलेजे में बिठा लें। झुनिया ने उसकी पीठ में हलका-सा घूँसा जमाया -- लगे औरों की तरह तुम भी चापलूसी करने। मैं जैसी कुछ हूँ, वह मैं जानती हूँ। मगर इन लोगों को तो जवान मिल जाय। घड़ी-भर मन बहलाने को और क्या चाहिये। गुन तो आदमी उसमें देखता है, जिसके साथ जनम-भर निबाह करना हो। सुनती भी हूँ और देखती भी हूँ, आजकल बड़े घरों की विचित्र लीला है। जिस महल्ले में मेरी ससुराल है, उसी में गपडू-गपडू नाम के कासमीरी रहते थे। बड़े भारी आदमी थे। उनके यहाँ पाँच सेर दूध लगता था। उनकी तीन लड़कियाँ थीं। कोई बीस-बीस, पच्चीस-पच्चीस की होंगी। एक-से-एक सुन्दर। तीनों बड़े कालिज में पढ़ने जाती थीं। एक साइत कालिज में पढ़ाती भी थी। तीन सौ का महीना पाती थी। सितार वह सब बजावें, हरमुनियाँ वह सब बजावें, नाचें वह, गावें वह; लेकिन ब्याह कोई न करती थी। राम जाने, वह किसी मरद को पसन्द नहीं करती थीं कि मरद उन्हीं को पसन्द नहीं करता था। एक बार मैंने बड़ी बीबी से पूछा, तो हँसकर बोलीं -- हम लोग यह रोग नहीं पालते; मगर भीतर-ही-भीतर ख़ूब गुलछर्रे उड़ाती थीं। जब देखूँ, दो-चार लौंडे उनको घेरे हुए हैं। जो सबसे बड़ी थी, वह तो कोट-पतलून पहनकर घोड़े पर सवार होकर मर्दों के साथ सैर करने जाती थी। सारे सहर में उनकी लीला मशहूर थी। गपडू बाबू सिर नीचा किये, जैसे मुँह में कालिख-सी लगाये रहते थे। लड़कियों को डाँटते थे, समझाते थे; पर सब-की-सब खुल्लमखुल्ला कहती थीं -- तुमको हमारे बीच में बोलने का कुछ मजाल नहीं है। हम अपने मन की रानी हैं, जो हमारी इच्छा होगी, वह हम करेंगे। बेचारा बाप जवान-जवान लड़कियों से क्या बोले। मारने-बाँधने से रहा, डाँटने-डपटने से रहा; लेकिन भाई बड़े आदमियों की बातें कौन चलाये। वह जो कुछ करें, सब ठीक है। उन्हें तो बिरादरी और पंचायत का भी डर नहीं। मेरी समझ में तो यही नहीं आता कि किसी का रोज़-रोज़ मन कैसे बदल जाता है। क्या आदमी गाय-बकरी से भी गया-बीता हो गया है? लेकिन किसी को बुरा नहीं कहती भाई! मन को जैसा बनाओ, वैसा बनता है। ऐसों को भी देखती हूँ, जिन्हें रोज़-रोज़ की दाल-रोटी के बाद कभी-कभी मुँह का सवाद बदलने के लिए हलवा-पूरी भी चाहिए। और ऐसों को भी देखती हूँ, जिन्हें घर की रोटी-दाल देखकर ज्वर आता है। कुछ बेचारियाँ ऐसी भी हैं, जो अपनी रोटी-दाल में ही मगन रहती हैं। हलवा-पूरी से उन्हें कोई मतलब नहीं। मेरी दोनों भावजों ही को देखो। हमारे भाई काने-कुबड़े नहीं हैं, दस जवानों में एक जवान हैं; लेकिन भावजों को नहीं भाते। उन्हें तो वह चाहिए, जो सोने की बालियाँ बनवाये, महीन साड़ियाँ लाये, रोज़ चाट खिलाये। बालियाँ और मिठाइयाँ मुझे भी कम अच्छी नहीं लगतीं; लेकिन जो कहो कि इसके लिए अपनी लाज बेचती फिरूँ तो भगवान् इससे बचायँ। एक के साथ मोटा-झोटा खा-पहनकर उमिर काट देना, बस अपना तो यही राग है। बहुत करके तो मर्द ही औरतों को बिगाड़ते हैं। जब मर्द इधर-उधर ताक-झाँक करेगा तो औरत भी आँख लड़ायेगी। मर्द दूसरी औरतों के पीछे दौड़ेगा, तो औरत भी ज़रूर मर्दों के पीछे दौड़ेगी। मर्द का हरजाईपन औरत को भी उतना ही बुरा लगता है, जितना औरत का मदद्म को। यही समझ लो। मैंने तो अपने आदमी से साफ़-साफ़ कह दिया था, अगर तुम इधर-उधर लपके, तो मेरी भी जो इच्छा होगी वह करूँगी। यह चाहो कि तुम तो अपने मन की करो और औरत को मार के डर से अपने क़ाबू में रखो, तो यह न होगा। तुम खुले-ख़ज़ाने करते हो, वह छिपकर करेगी। तुम उसे जलाकर सुखी नहीं रह सकते। गोबर के लिए यह एक नयी दुनिया की बातें थीं। तन्मय होकर सुन रहा था। कभी-कभी तो आप-ही-आप उसके पाँव रुक जाते, फिर सचेत होकर चलने लगता। झुनिया ने पहले अपने रूप से मोहित किया था। आज उसने अपने ज्ञान और अनुभव से भरी बातों और अपने सतीत्व के बखान से मुग्ध कर लिया। ऐसी रूप, गुण, ज्ञान की आगरी उसे मिल जाय, तो धन्य भाग। फिर वह क्यों पंचायत और बिरादरी से डरे? झुनिया ने जब देख लिया कि उसका गहरा रंग जम गया, तो छाती पर हाथ रखकर जीभ दाँत से काटती हुई बोली -- अरे, यह तो तुम्हारा गाँव आ गया! तुम भी बड़े मुरहे हो, मुझसे कहा भी नहीं कि लौट जाओ। यह कहकर वह लौट पड़ी। गोबर ने आग्रह करके कहा -- एक छन के लिए मेरे घर क्यों नहीं चली चलती? अम्माँ भी तो देख लें। झुनिया ने लज्जा से आँखें चुराकर कहा -- तुम्हारे घर यों न जाऊँगी। मुझे तो यही अचरज होता है कि मैं इतनी दूर कैसे आ गयी। अच्छा, बताओ अब कब आओगे? रात को मेरे द्वार पर अच्छी संगत होगी। चले आना, मैं अपने पिछवाड़े मिलूँगी।[3]

' और जो न मिली? '

' तो लौट जाना। '

' तो फिर मैं न आऊँगा। '

' आना पड़ेगा, नहीं कहे देती हूँ। '

' तुम भी वचन दो कि मिलोगी? '

IJMRSETM

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 11, November 2020

' मैं वचन नहीं देती। '

' तो मैं भी नहीं आता। '

' मेरी बला से! '

झुनिया अँगूठा दिखाकर चल दी। प्रथम-मिलन में ही दोनों एक दूसरे पर अपना-अपना अधिकार जमा चुके थे। झुनिया जानती थी, वह आयेगा, कैसे न आयेगा? गोबर जानता था, वह मिलेगी, कैसे न मिलेगी? गोबर जब अकेला गाय को हाँकता हुआ चला, तो ऐसा लगता था, मानो स्वर्ग से गिर पड़ा है।[4]

निष्कर्ष

हिंदी साहित्य जगत में प्रेमचंद (31 जुलाई 1880- 8 अक्टूबर 1936) की लोकप्रियता इस कदर है कि उन्हें 'उपन्यास सम्राट' की उपाधि दी गई है। यह उनकी कलम का ही जादू है कि शायद ही कोई बच्चा उनके नाम और उनकी कहानी 'ईदगाह' के बारे में न जानता हो।उनकी सभी रचनाएं समाज की विभिन्न पहलुओं, मनोदशाओं एवं विडम्बनाओं को दर्शाती हैं , फिर चाहे वह कहानियों के माध्यम से हो या फिर उपन्यासों के माध्यम से। गंवई पृष्ठभूमि, जमींदारी प्रथा, मानवीय संवेदनाएं उनकी रचनाओं में प्रमुख स्थान पाते हैं , जो तत्कालीन समाज का आईना लगती हैं।उनकी कहानियों की चर्चा करें तो 'ईदगाह', 'नशा', 'दो बैलों की कथा' ,'नमक का दरोगा', 'कफ़न' जैसे कई कहानियां और 'सेवासदन' ,'कायाकल्प' ,'गबन' और 'गोदान' आदि उपन्यास आज भी प्रासंगिक लगते हैं क्योंकि ये समाज की निम्न एवं मध्यवर्गीय सोच और रहन सहन को दर्शाते हैं। उर्दू और हिंदी दोनों ही भाषा में उन्होंने प्रसिद्धी पाई जो उनकी मृत्यु के बाद भी कम नहीं हुई है और उनकी रचनाएं हिंदी साहित्य की धरोहर हैं।[7]

संदर्भ

1. Chatterjee, Saibal (15 August 2004). "Gulzar's vision of timeless classics". The Tribune. अभिगमन तिथि 25 August 2021.
2. ↑ "गोदान उपन्यास की रचना का रहस्य". जागरण. मूल से 27 मार्च 2015 को पुरालेखित.
3. प्रेमचंद: विवेचना (आलोचनात्मक लेखों का संग्रह);
4. प्रेमचंद, रामविलास शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1994;
5. प्रेमचंद और उनका युग, रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1967;
6. प्रेमचंद कलम का सिपाही, अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, सं. 1962;
7. प्रेमचंद: साहित्यिक विवेचन, नंददुलारे वाजपेयी, 1956.